विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ

HIN-675 शोध प्रबंध

श्रेयांक: 16

स्नातकोत्तर कला (हिंदी)

की उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध

शोधार्थी

श्रद्धा रमेश परब

अनुक्रमांक:22P0140022

PR Number: 201809256

मार्गदर्शक

ममता दीपक वर्लेकर

शणै गोंयबाब भाषा और साहित्य संकाय

हिंदी अध्ययन शाखा

गोवा विश्वविद्यालय

अप्रैल 2024

परीक्षक: **Seal of the School**

DECLARATION

I hereby declare that the data presented in this Dissertation report entitled, **"विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ"**is based on the results of investigations carried out by me in the Discipline of Hindi at Shenoi Goembab School of Languages and Literature, Goa University under the Supervision of Ms. Mamta Deepak Verlekar and the same has not been submitted elsewhere for the award of a degree or diploma by me. Further, I understand that Goa University or its authorities will be not be responsible for the correctness of observations/experimental or other findings given the dissertation. I hereby authorize the University authorities to upload this dissertation on the dissertation repository or anywhere else as the UGC regulations demand and make it available to any one as needed.

Shraddha Ramesh Parab

22P0140022

Date:18.04.2024

Place: Goa University

COMPLETION CERTIFICATE

This is to certify that the dissertation report **"विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ"** is a bonafide workcarried out by Ms. Shraddha Ramesh Parab under my supervision in partial fulfilment of the requirements for the award of the degree of Master of Arts in the Discipline of Hindi at the Shenoi Goembab School of Languages and Literature, Goa University.

Ms. Mamta Deepak Verlekar

Prof. Anuradha Wagle

Dean, SGSLL, Goa University School Stamp

Date:18.04.2024

Place: Goa University

गोंय विद्यापीठ
ताळगांव पठार,
गोंय – ४०३ २०६
फोन : +९१–८६६९६०९०४८

ATMANIRBHAR BHARAT
SWAYAMPURNA GOA

Goa University
Taleigao Plateau, Goa-403 206
Tel : +91-8669609048
Email : registrar@unigoa.ac.in
Website : www.unigoa.ac.in

(Accredited by NAAC)

Ref. No.: GU/LIB/ATTENDANCE CERT./2024/243 Date: 3/05/2024

TO WHOM SO EVER IT MAY CONCERN

This is to certify that Miss Shraddha Ramesh Parab, a student of Goa University, M.A. (Hindi), visited the Goa University Library for her reference work on the following dates and completed 41 hours & 25 minutes of research internship as a part of her M.A. dissertation.

The detailed dates and times she visited are attached herewith.

This certificate has been issued at the written request of Assistant Professor Ms. Mamta Deepak Verlekar .

3/5/2024

University Librarian
(Dr. Sandesh B. Dessai)

Dr. Sandesh B. Dessai
UNIVERSITY LIBRARIAN
Goa University
Taleigao - Goa.

GOA UNIVERSITY LIBRARY GOA

VISIT TO THE GOA UNIVERSITY LIBRARY

SR. NO.	DATE	TIME	HOURS
1.	27/04/2023	12:16-4:40	4hours 24min
2.	22/06/2023	11:08-2:07	2hours 59min
3.	12/07/2023	11:42-3:00	3hours 18min
4.	14/07/2023	2:10-4:00	1hours 50min
5.	17/07/2023	10:48-1:48	3hours
6.	31/07/2023	4:27-4:50	23min
7.	02/08/2023	11:33-3:58	4hours 25min
8.	18/08/2023	12:11-4:06	3hours 55min
9.	30/08/2023	11:25-4:30	5hours 05min
10.	09/10/2023	3:10-4:27	1hours 17min
11.	20/10/2023	1:27-3:27	2hours
12.	23/10/2023	2:00-3:44	1hours 44min
13.	30/10/2023	1:03-1:15	13min
14.	30/10/2023	2:25-2:57	32min
15.	28/11/2023	12:13-01-13	1hours
16.	12/12/2023	01:07-01:12	6min
17.	01/02/2025	1:25-1:46	12min
18.	27/02/2024	10:00-11:45	45min
19.	13/03/2024	11:33-1:00	1hours 27min
20.	28/03/2024	10:50-01:07	2hours 17min
21.	18/04/2024	5:23-6:00	33min
TOTAL HOURS			**41 hours 25 min**

Signature of the Guide
Asst. Prof. Ms. Mamta Deepak Verlekar

Signature of the University Librarian
Dr. Sandesh B. Dessai

Signature of the Student
Miss Shraddha Ramesh Parab

अनुक्रम

अध्याय	विवरण	पृष्ठ संख्या
	Declaration	ii
	Completion certificate	iii
	अनुक्रम	iv-viii
	कृतज्ञता	ix
1. प्रस्तावना	1.1शोध समस्या और प्रश्न 1.2 संशोधन कार्य की प्रासंगिकता और आवश्यकता 1.3 अनुसंधान के उद्देश्य 1.4 साहित्यिक पुनर्विश्लेषण 1.5 प्रस्तावित अनुसंधान के लिए शोध पद्धति 1.6 अध्याय विभाजन	1-15
2 विष्णु प्रभाकर: सामान्य परिचय	2.1 प्रस्तावना 2.2 जन्म 2.3 बचपन 2.4 पारिवारिक वातावरण 2.5 साहित्य के प्रेरणा स्रोत	16-32

	2.6 कृतित्व 2.7 कथा साहित्य 2.8 कहानी साहित्य 2.9 उपन्यास 2.10 नाटक 2.11 एकांकी 2.12 जीवनी संस्मरण 2.13 निबंध 2.14 यात्रावृतांत 2.15 लघुकथा 2.16 बालसाहित्य 2.17 पुरस्कार,पदक, सम्मान	
3 सामाजिक यथार्थ: अवधारणा एवं स्वरूप	3.1 प्रस्तावना 3.2 समाज: अर्थ एवं परिभाषा 3.2.1 समाज का अर्थ 3.2.2 समाज की परिभाषा 3.3 यथार्थ: अर्थ एवं परिभाषा 3.3.1 यथार्थ का अर्थ 3.3.2 यथार्थ की परिभाषा 3.3.3 यथार्थ और यथार्थवाद	33-53

	3.4 सामाजिक यथार्थ: अर्थ एवं परिभाषा 3.4.1 सामाजिक यथार्थ का अर्थ 3.4.2 सामाजिक यथार्थ की परिभाषा 3.4.3 हिंदी साहित्य में सामाजिक यथार्थ	
4 विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ	4.1 विष्णुप्रभाकर के कहानियों का कथानक 4.1.1 प्रस्तावना 4.1.2 बंटवारा 4.1.3 एक मां, एक देश 4.1.4 मेरा बेटा 4.1.5 तांगेवाला 4.1.6 नाग-फांस 4.1.7 पर्वत से भी ऊंचा 4.1.8 चाची 4.1.9 मारिया 4.1.10 खंडित पूजा 4.1.11 सांचे और कला 4.1.12 एक और दुराचारिणी 4.1.13 एक अधूरा पत्र 4.1.14 मुरब्बी 4.1.15 हमें गिराने वाले	54-98

	4.1.16 अंधेरे आंगन वाला मकान 4.1.17 लावा 4.1.18 कर्फ्यू और आदमी 4.2 विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ का विश्लेषण 4.2.1 प्रस्तावना 4.2.2 पारिवारिक समस्या: संयुक्त परिवार के विघटन की समस्या 4.2.3 दांपत्य जीवन संबंधित समस्या 4.2.4 सांप्रदायिक दंगों का खूनी प्रभाव 4.2.5 निम्नवर्गीय जीवन की विवशतावों का चित्रण 4.2.6 नारी की सामाजिक स्थिति 4.2.7 विवश तथा उपेक्षित माँ 4.2.8 गरीबी की समस्या 4.2.9 मानवीय संबंध 4.2.10 पुलिस द्वारा किया गया उत्पीड़न 4.2.11 आम आदमी का संघर्षमयजीवन 4.2.12 मानसिक द्वंद्व	

5	निष्कर्ष	99-104
	सन्दर्भ	105-111

कृतज्ञता

'विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ' यह लघु शोध प्रबंध पूरा करना संभव नहीं था यदि मुझे किसी का उत्तम मार्गदर्शन नहीं मिला होता। शणै गोंयबाब भाषा और साहित्य महाशाला गोवा विश्वविद्यालय हिंदी विभाग की मैं आभारी हूं क्योंकि उन्होंने हमें यह लघु शोध प्रबंध करने का मौका देकर अपने विचारों को व्यक्त करने का अवसर दिया। प्रस्तुत शोध कार्य मेरे शोध निर्देशिका सहायक प्राध्यापक ममता वेर्लेकर जी के मार्गदर्शन में संपन्न हुआ। उन्होंने समय-समय पर शोध कार्य के संबंध में मेरा पथ प्रदर्शन किया एवं मेरे ज्ञान में वृद्धि की। उन्होंने विषय चयन से लेकर शोध कार्य संपन्न होने तक मेरी सहायता की, मुझे जिन-जिन किताबों की आवश्यकता थी उन सभी किताबों के बारे में उन्होंने मुझे जानकारी दी। उन्होंने मुझे अपना बहुमूल्य समय दिया एवं लेखन कार्य में सहायता की। उनके पूरे सहयोग के लिए मैं उनकी सदैव आभारी रहूंगी।

हिंदी विभाग के सभी अध्यापकों के प्रति में मेरी कृतज्ञता व्यक्त करती हूं। मेरे माता-पिता एवं मेरे भाई ने शोध कार्य करने के लिए मेरी मदद की है, मैं उन सब की ऋणी बनी रहूंगी। मेरे शोध समूह के सदस्य तन्वी, अमीषा, पूजा, दर्शना, पवित्रा ने भी मेरी बहुत सहायता की उनकी मैं आभारी हूँ।

इसके अतिरिक्त गोवा विश्वविद्यालय ग्रंथालय, केंद्रीय पुस्तकालय पणजी, वहां के कर्मचारियों ने मेरे विषय से संबंधित किताबें ढूंढने में मेरी पूरी मदद की और मेरा काम आसान किया। मैं सदैव उनके ऋणी रहूंगी। जिन-जिन विद्वानों के ग्रंथो का मैंने संदर्भ के रूप में उपयोग किया उनके प्रति भी में अपना आभार ज्ञापित करती हूं।

प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से जिसने भी मेरे लघु शोध प्रबंध में सहायता प्रदान की है, मैं उन सबके प्रति अपना आभार ज्ञापित करती हूं।

प्रथम अध्याय

प्रस्तावना

प्रस्तावना

इस लघु शोध प्रबंध के लिए विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ यह विषय चुना गया है। विष्णु प्रभाकर एक ऐसे महान लेखक थे, जिन्होंने साहित्य की लगभग सभी विधाओं में एक अलग दृष्टि रखकर साहित्य का निर्माण किया है। लेकिन वे अपने आप को कहानीकार ही अधिक मानते हैं। उनका साहित्य सीधे जीवन से जुड़ा है, जिसमें उन्होंने सीधे मनुष्य के यथार्थ परिवेश को देखा है और उसे तद्नुसार चित्रित किया है। वे स्वयं मध्यवर्ग की मिट्टी से जुड़े रहने के कारण अपने भोगे हुए यथार्थ को व्यापक रूप में विभिन्न आयामों में ढालने में काफ़ी समर्थ सिद्ध हुए है। उनके पूरे साहित्य में मध्यवर्गीय जीवन दृष्टि विविध रूपों में उभरकर सामने आई है। उन्होंने अपनी कहानियों में मनुष्यता को ही प्रमुखता दी है। मनुष्य में ही उनकी अधिक रुचि रही है। मानव जीवन में जो झूठ और पाखंड उन्होंने देखा है, वह उनकी कहानियों में ऊभर आया है। उन्होंने अपनी कहानियों में सत्य को स्वर देने का प्रयत्न किया है। इसी लिए मैंने विष्णु प्रभाकर का कहानीकार के रूप का अध्ययन हेतु चयन किया है।

पुरानी पीढ़ी के कहानीकार होते हुए भी स्वातंत्र्योत्तर काल में परिवर्तित नए मूल्यों की स्थापना करके कई युगीन परिस्थितियों के अनुसार व्यक्ति और समाज का संबंध फिर से स्थापित करने में विष्णु प्रभाकर का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। विष्णु प्रभाकर सामाजिक जीवन की विभिन्न समस्याओं को लेकर लिखनेवाले कहानीकार थे। उन्होंने अपनी कहानियों में समाज में व्याप्त अनेक समस्याओं को रेखांकित किया है।

समाज हमारे जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जीवन में बदलाव लाने के लिए, सही तरीके से जीने के लिए, शांति बनाए रखने के लिए, आगे आने वाली पीढ़ियों की अच्छी परवरिश के लिए, आज समाज अत्यंत आवश्यक है। डॉ० ए० जे० शा० कहते हैं कि, "केवल समाज में ही मनुष्य भाषा का प्रयोग करना सीखता है, अपने विचारों को प्रकट करना सीखता है यह एक सामूहिक जीवन ही है जो व्यक्ति को शिक्षित तथा सभ्य बनाता है। इस प्रकार समाज में रहकर मनुष्य ज्ञान विज्ञान तथा आर्थिक उपार्जन की कला सीख सकता है।"[1] मनुष्य के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए समाज कितना आवश्यक है इस सम्बन्ध में बेनी प्रसाद ने ठीक ही लिखा है कि "यदि समाज न होता तो प्रेम अथवा घृणा, ईर्ष्या अथवा प्रतिस्पर्द्धा, प्रतिशोध या अन्य भावनाओं को जन्म ही न होता। इस दशा में न गाँव ही होते और न नगर ही न कोई राजनीतिक और न आर्थिक कार्यक्रम ही होते और न कला अथवा साहित्य के विकास का अवसर ही मिलता।"[2] लेकिन आज समाज अनेक समस्याओं से घिरा हुआ है। मनुष्य के दुर्व्यवहारों के कारण समाज में विभिन्न समस्याओं ने जन्म लिया है। समाज में ऐसी बहुत सी समस्याएं हैं, जैसे कि बेरोजगारी, अशिक्षा, गरीबी, बाल विवाह, संयुक्त परिवार के टूटने की समस्या, भ्रष्टाचार, जातिवाद, अहंकार आदि जिससे मनुष्य आज भी जूझ रहा है। कई साहित्यकारों ने जैसे मुंशी प्रेमचंद, ममता कालिया आदि जैसे श्रेष्ठ कहानीकारों ने सामाजिक समस्याओं पर अपनी कलाम चलाई है, जिसमें विष्णु प्रभाकर का नाम बहुचर्चित है।

विष्णु प्रभाकर ने अपने साहित्य में समाज में व्याप्त अनेक समस्याओं को रेखांकित किया है। विष्णु प्रभाकर प्रेमचन्दोत्तर पीढ़ी के उन साहित्य के उन्नायकों में से हैं, जो लगभग पचास वर्षों से निरन्तर सृजनशील रहे हैं। वे सामाजिक चेतना के प्रतिबद्ध कहानीकार थे

जिन्होंने स्वतंत्रपूर्व काल से लेकर स्वातंत्र्योत्तर काल तक की सभी गतिविधियों को नज़दीक से देखा है और उसे अपने कहानीकार के व्यक्तित्व में ढालने का प्रयास भी किया है साथ-साथ उसे अपनी अनुभूति के स्तर पर एक नया संदर्भ दिया है। विष्णु प्रभाकर का नियमित लेखन 1934 से प्रारंभ हुआ। उनकी अधिकतर कहानियों का विषय समाज का यथार्थ चित्रण ही रहा है। स्वाधीनता के बाद कहानी में कई बदलाव आए पर वे अपने आप को तीसरे दशक के कथाकार मानते रहे। उन्होंने अपनी अधिकतर कहानियों में कल्याणकारी मानवता की भावना को ही उभरा है। वह कहते हैं कि –"मैंने अनीति का प्रचार करने के लिए कलम नहीं पकड़ी। मैंने मनुष्य के अंदर में छिपी हुई मनुष्यता को उसे महिमा को, जिसे सब नहीं देख पाते, नाना रूपों में अंकित करके प्रस्तुत किया है।"[3] उन्होंने अपने जीवन में जो कुछ भी अनुभव किया, जो उन्होंने देखा है उसे अपने साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया।

समाज में जो कुछ भी घटित होता है उसे साहित्य में प्रतिबिंबित होते देखा जा सकता है। इसलिए साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। ऐसी स्थिति में साहित्य एक ऐसी विधा है जिसके माध्यम से हम समाज में सुधार ला सकते हैं। विष्णु प्रभाकर नेअपने साहित्य में समाज का यथावत चित्रण किया है। कोई भी साहित्यकार अपने परिवेश से प्रभावित होकर ही साहित्य का सर्जन करता है, वैसे ही विष्णु प्रभाकर उनका साहित्य सीधे जीवन से जुड़ा हुआ है, उन्होंने अपनी इर्द-गिर्द घटित घटनाओं को लेकर ही अपने साहित्य का विषय बनाया है, जैसे की भारत को स्वतंत्रता मिलने से पहले की स्थिति और स्वातंत्र्योत्तर के बाद की स्थिति को उन्होंने साहित्य में पूर्ण यथार्थ के साथ व्यक्त किया है। विष्णु प्रभाकर ने जाती-पाती, उच्च-नीच, अमीर-गरीब आदि भेद-भाव को नकारा है। वे मानव के पुजारी थे, धर्म के नहीं। सभी इंसानों के दर्द को उन्होंने अपनी कहानियों का माध्यम बनाया। उन्होंने असामाजिकता की

दीवार को सामाजिकता के बल पर गिराया, लोगों में मानवीय गुणों का संचार किया। जातिवाद के प्रबल शत्रु बनकर विष्णु प्रभाकर हमेशा लडते रहे, उनका मूल लक्ष्ययथार्थ का सूक्ष्म निरीक्षण और अंकन करना रहा है, जिसमें उनकी मनुष्य के प्रति सहानुभूति भी बराबर बनी रही है। उनकी कहानियों में व्यक्ति और समाज घुल-मिल गया है। उनकी कहानियों का मूल स्वर मनुष्य की पहचान और हर प्रकार के शोषण का विरोध करना हैं।

इसीलिए मैंने विष्णु प्रभाकर का कहानीकार के रूप का अध्ययन हेतु चयन किया है। इस शोध के माध्यम से विष्णु प्रभाकर की कहानियों में आई सभी समस्याओं पर चिंतन मनन करने का मेरा प्रयास है।

विष्णु प्रभाकर की कहानियों में सामाजिक यथार्थ का अध्ययन करना महत्वपूर्ण है, क्योंकि उनकी कहानियों में समाज में व्याप्त सभी समस्याओं का चित्रांकन हुआ है। साथ साथ उन समस्याओं को सुलझाने का भी यथाचित उपाय बताया है। उनकी कहानियों के एक-एक पात्र समाज को नई राह देने में सक्षम है। उनकी कहानियों के माध्यम से हमें उनकी सोच और विचारों को समझने का अवसर प्राप्त होता है और समाज में सुधार लाने की प्रेरणा मिलती है।

प्रत्येक समाज में सामाजिक मूल्य पाए जाते हैं। उन्होंने स्वयं कहां है कि "प्राणी मात्र का मिलन ही साहित्य है और यही सामाजिकता है। हम सब समाज की कुरीतियों पर प्रहार करते हैं। अच्छे समाज का निर्माण कैसे हो उसकी और संकेत करते है।"[4]उन्होंने अपने कहानियों में सामाजिकता की भावना को ही बरकरार रखा।

विष्णु प्रभाकर ने हिंदी में लगभग सभी विधाओं में एक अलग दृष्टि रखकर साहित्य का निर्माण किया है। उन्होंने बहुत सारे कहानी सग्रह लिखें हैं, जैसे की धरती अब भी घूम रही

है, खिलौना, मेरा वतन, मेरी प्रेम कहानियाँ आदिलेकिन मैंने “विष्णु प्रभाकर संकलितकहानियाँ” यह एक ही पुस्तक लेकर उनमें सामाजिक यथार्थ पर अध्ययन करने का प्रयास किया है, यही मेरी इस शोध प्रबंध की सीमा रही है।

1.1 शोध समस्या और प्रश्न:

विष्णु प्रभाकर की कहानियों में उनके परिवेश के विविध आयामों के अनुसार समस्याओं का विवेचन किया है। विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों में कौन सी सामाजिक समस्याओं को चित्रित किया है? उसे उन्होंने किस प्रकार से अपनी कहानियों में दर्शाया है, यह जानना जरूरी है और समस्याओं के चित्रण के लिए कौन से साहित्यक उपकरणों का प्रयोग किया है? विष्णु प्रभाकर ने जो भी सामाजिक समस्याएं जैसे सांप्रदायिकता, भ्रष्टाचार, पारिवारिक समस्या, गरीबी आदि समस्याएं अपनी कहानियों में उठाई है वे समस्याएं क्या आज भी प्रासंगिक है? इस पर विचार किया जाएगा। अंत में विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों के माध्यम से सामाजिक समस्याओं को किस प्रकार समाज के सामने रखते हैं इस पर विचार करना आवश्यक है।

1.2 संशोधन कार्य की प्रासंगिकता और आवश्यकता:

इस शोध प्रबंध के लिए “विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ” यह विषय चुना है। आज स्वतंत्रता के बाद मानवीय समुदायों में सम्बन्धों का विच्छेद हो रहा है। फलतः उसके पारिवारिक व सामाजिक सम्बन्ध विघटित होने लगे हैं। विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों में सामाजिक स्तर पर टूट रहे इस ढाँचे का एवं शोषित पीड़ित समाज का वास्तविक रूप से वर्णन किया है। समाज के इन जीवित व्यक्तियों और उनसे जुड़ी अनन्त

समस्याओं का भी वर्णन है इसलिए इनके कथा-साहित्य में चित्रित समस्याओं की दृष्टि से मूल्यांकन होना अनिवार्य है। यह शोध कार्य इस दिशा में किया गया विनम्र प्रयास मात्र है।

इस विषय को समाज की दृष्टि से और साहित्य की दृष्टि से विस्तारपूर्वक जानना अति आवश्यक है। समाज में ऐसी बहुत सारी समस्याएं हैं जिसका मनुष्य आज भी सामना कर रहा है। जैसे की पीढ़ी संघर्ष भ्रष्टाचार नारी की स्थिति पारिवारिक समस्या जाति भेद आदिजैसेअनेक विषयों को विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों में चित्रित किया है, जो कि आज भी समाज में दिखाई देते हैं। उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज में फैले दुर्व्यवहार, कुरीतियां और एसी बहुत सारी समस्याओं का विरोध किया हैजिसके कारण समाज में सांप्रदायिक दंगे हो रहे हैं, लोगों का एक दूसरे के प्रति प्रेम कम होता जा रहा है और मानवीय संवेदना खत्म हो रही है ऐसी स्तिथियों को समाप्त करने का प्रयास विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों के माध्यम से किया और समाज के लोगों को जागृत करने का प्रयास किया है, ताकि समाज में सुधार आ सके। विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों में ज्यादातर सामाजिक समस्याओं पर ही ध्यान दिया है। इसलिए समाज को विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ इस विषय को जानना आवश्यक है। समाज के साथ साहित्य में भी जानना उतना ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि साहित्य और समाज का पारस्परिक संबंध होता है। एक लेखक अपने विचारों को अपनी रचनाओं को साहित्य के माध्यम से ही व्यक्त करता है, और समाज को एक नई दिशा प्रदान करता है। क्योंकि आज लोगों के मन में साहित्य को पढ़कर ही समाज में सुधार लाने की भावना उत्पन्न हुई है। और आज विष्णु प्रभाकर की कहानियाँ साहित्य और समाज के लिए मार्गदर्शन बन गई है। विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों के माध्यम से लोगों के मन में मानवता और दया की भावना उत्पन्न करने की कोशिश की है

और समाज में सुधार लाने का प्रयास किया है। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर मैंने यह विषय अपनी लघु शोध प्रबंध के लिए चुना है क्योंकि यह आज के समाज के लिए आवश्यक है।

विष्णु प्रभाकर ने जिस परिवेश को लेकर कहानी लिखी है वह आज भी प्रासंगिक है, क्योंकि समाज में ऐसे बहुत से लोग है जो आज भी पारिवारिक विघटन, पीढ़ी संघर्ष, समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार से जूझ रहे हैं। इन सभीविषयों को उन्होंने अपनीकहानियों के माध्यम से व्यक्त किया है।

विष्णु प्रभाकर की कहानियों में सभी समस्याएँयथार्थ रूप से चित्रित है। उनका मूल लक्ष्य यथार्थ का सूक्ष्म निरीक्षण और अंकन करना रहा है। उन्होंने अपने साहित्य मे समाज में व्याप्त अनेक समस्याओं को रेखांकित किया है, जो कि आज भी समाज में दिखाई देती हैं। तो उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज में फैले दुर्व्यवहार, कुरीतियों और ऐसे बहुत सारी समस्याओं का विरोध किया है, जो मनुष्य की भावनाओं, मूल्यों को ठेस पहुंचती हैं। सामाजिक समस्याओं के कारण मानवता की भावना खत्म हो रही है। आए दिन मनुष्य अपराध का शिकार बन रहा है, इसे स्पष्ट होता है कि जो समस्या पहले थी वह आज भी प्रासंगिक है। विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों के माध्यम से ऐसे क्षण के खिलाफ आवाज उठाया है और समाज में लोगों को जागृत करने का प्रयास किया है। जो वर्तमान समय में हर एक मनुष्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

समय में मनुष्य समाज, आपसी संबंधों, रिश्ते-नातों, राजनीतिक गतिविधियों, आध्यात्मिकता इत्यादि में से संवेदना लुप्त होती जा रही है। इसलिए हमें हर कहीं कृत्रिमता नज़र आ रही है। स्वतंत्रता के पश्चात् देश तो अपना हो गया, पर लोग जैसे पराये हो गए। आज

की महती आवश्यकता है उन संवेदनाओं को फिर से जगाने की। ये संवेदनाएँ जीवन के खोखलेपन को स्नेह के रस से दूर कर, उनमें सार्थकता भर देंगी। इस दृष्टि से विष्णु प्रभाकर के कथा-साहित्य में चित्रित समस्याएँ इस दिशा में पहला कदम हो सकता है। सामाजिक उपयोगिता की दृष्टि से भी इसकी प्रासंगिकता स्वयं सिद्ध है।

1.3 अनुसंधान के उद्देश्य:

- विष्णु प्रभाकर की व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अध्ययन करना।
- सामाजिक यथार्थ के स्वरूप एवं अवधारणा को समझना।
- विष्णु प्रभाकर के कहानी साहित्य में सामाजिक यथार्थ का विश्लेषण करना।
- विष्णु प्रभाकर के कहानियों में व्याप्त सामाजिक विघटन, आर्थिक स्तिथी, भ्रष्टाचार, आदि को जानना, और इन समस्याओं के निदान पर विचार करना।

1.4 साहित्यिक पुनर्विश्लेषण:

- डॉ सुमा रोडनवर विष्णु प्रभाकर के साहित्य के बारे में बताते हुए कहती है की, हिंदी के महान उपन्यासकार मुंशी प्रेमचंद ने कहा था कि:- "भविष्य में उपन्यास में कल्पना कम सत्य अधिक होगा। हमारे चरित्र कल्पित न होंगे बल्कि व्यक्तियों के जीवन पर आधारित होंगे। भावी उपन्यास जीवन चरित्र होना चाहिए किसी बड़े आदमी या छोटे आदमी का और अन्त में उन्होंने कहा था कि ऐसे बहुत कम लोग हैं, जिन्हें बहुत से मनुष्यों को भीतर से जानने का गौरव प्राप्त है।"[5]यह बात विष्णु प्रभाकर के साहित्य के लिए बहुत ही सही सिद्ध होती हैं।

- डॉ० रघुवीर सिन्हा का कथन है, "जीवन के प्रति एक स्थूल भौतिकवादी दृष्टिकोण प्रबल होता जा रहा है। इस कथन की पुष्टि में विष्णु जी की कहानी 'सलीब' भी प्रस्तुत है। प्रमोद सक्सेना द्वारा दी गई रिश्वत लेने की स्वीकृति को भौतिकवादी जीवन की सही पहचान मानकर चलते हैं। लोगों के व्यावहारिक दृष्टिकोण का यह विधान स्पष्ट करता है, "देखो इस सनकी को. ईमानदार बनने चला था, नौकरी भी खो बैठा। क्या यह नहीं जानता था कि जो भी सत्य के मार्ग पर चलता है वह दुःख भोगता है और जो असत्य का मार्ग अपनाता है वह सुखी होता है।"[6]
- डॉ के. पी शाह कहते हैं कि, "हिंदी साहित्य में विष्णु प्रभाकर का स्थान बहुत ऊंचा है। लेकिन बड़े अफसोस की बात है कि एक जेष्ठ साहित्यकार की ओर हिंदी के आलोचकों ने पर्याप्त ध्यान नहीं दिया है।" उनका यह भी मत है कि "स्वतंत्र रूप में उनकी विविध साहित्यीक विधाओं का सूक्ष्म अध्ययन या उनकी जीवनी और साहित्य को लेकर अनुसंधान नहीं हुआ है। विष्णु प्रभाकर जैसे बहुमुखी प्रतिभावान और साहित्यिक के प्रति ये अन्याय है।"[7]
- गोपाल कृष्ण कौल उन्हें घुम्मकड़ मन के धनी मानते हुए कहते हैं, "आज कल प्रतिष्ठा की होड़ में जुटे लेखकों में यदि किसी लेखक में मित्रभाव और मानवीय समन्वय के गुण सहज रूप में दिखायी पडते हैं। तो वह लेखक निश्चय ही सामान्य से भिन्न हैं, विष्णुजी ऐसे ही लेखक हैं। उनके इस सहज गुणों के कारण उनमें मनुष्य को समग्र दृष्टि से परखने की क्षमता है। चाहे विष्णुजी के नाटक हो या कहानियाँ, उपन्यास हो या निबंध एवं उनकी अन्य रचनाएँ सभी में समग्र दृष्टि से मनुष्य को उद्घाटिक करने में का प्रयत्न हैं।"[8]

- विष्णु प्रभाकर जी के बारे में डॉ. रघुवीर दयाल वार्ष्णेय कहते हैं, "एक साहित्यकार के रूप में भी अपना परिचय उन्होंने साहित्य के विभिन्न अंगो का लेखन कर हिंदी जगत को दिया हैं। द्वितीय महायुद्ध, स्वतंत्रता प्राप्ति, बंगाल का अकाल आदि अनेक समसामयिक विषयों को लेकर उन्होंने अपने साहित्य का निर्माण किया। लेकिन द्वितीय विश्वयुद्ध ने जिस अकाल हिंसा, विभित्सता और नाटकीयता को जन्म दिया था। उसका चित्रण बिना किसी घृणात्मकता के लेखन (विष्णु प्रभाकर) ने सफलता से किया है।"[9]

विष्णु प्रभाकर की साहित्य का आधारित जीवन का यथार्थ है।उन्होंने अपने आसपास घटी घटनाओं को लेकर अपने साहित्य का विषय बनाया है। इस संदर्भ में डॉ सुमा रोडनवर ने अपनी किताब विष्णु प्रभाकर की कथा साहित्य में सामाजिकता इसमें कहां है कि विष्णु प्रभाकर ने अपने इर्द-गिर्द घटी घटनाओं को लेकर ही अपनी कथा साहित्य का विषय बनाया है।

विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों में व्यक्ति की आर्थिक स्थिति और जीवन मूल्यों के बारे में भी दर्शाया है,इस संदर्भ में डॉ रघुवीर सिन्हा ने कहा है कीजीवन के प्रति एक स्टॉल भौतिकवादी दृष्टिकोण प्रबल होता जा रहा है। इस कथन की दृष्टि में विष्णु प्रभाकर की कहानी सलीबभी प्रस्तुत है। प्रमोद सक्सेना द्वारा दी गई रिश्वत लेने की स्वीकृति को भौतिकवादी जीवन की सही पहचान मानकर चलते हैं।

1.5 प्रस्तावित अनुसंधान के लिए शोध पद्धति:

इस शोध कार्य के लिए विष्णु प्रभाकर की 18 कहानियां ली हैं, जो "विष्णु प्रभाकर संकलित कहानियां, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, 2009" इस पुस्तक में संग्रहित हैं। इस पुस्तक में संकलित कहानियों का आधार लेकर उसमें व्याप्त सामाजिक यथार्थ का विश्लेषण किया गया है। इसके लिए आलोचनात्मक सामग्री का आधार लिया है।अंतरजाल पर कई आलेख तथा वीडियो रूप में उपलब्ध सामग्री का भी आधार लिया गया है। इसी के साथ लेखक विष्णु प्रभाकर द्वारा प्रकाशित कुछ शोध आलेखों का अध्ययन किया गया है। पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों की सहायता ली गई हैऔर विष्णु प्रभाकर के साक्षात्कारों का आधार लिया गया हैं।

1.6 अध्याय विभाजन:

इस लघु शोध प्रबंध को पांच अध्यायों में विभक्त किया गया है। पहले अध्याय में शोध कार्य की प्रस्तावना है, इसमें संपूर्ण शोध कार्य का परिचय दिया गया है। दूसरा अध्याय 'विष्णु प्रभाकर का सामान्य परिचय', इसके अंतर्गत विष्णु प्रभाकर के व्यक्तित्व व कृतित्व की विभिन्न विशेषताओं का उल्लेख किया गया है। माता-पिता, परिवार, जन्म, शिक्षा, विष्णु नाम की महिमा व क्रांतिकारी आदि से सम्बन्धित सामग्री का आकलन किया गयाहै। कृतित्व के अन्तर्गत उनके पूरे साहित्य की जानकारी दी गई है। उन्होंने साहित्य की विभिन्न विधाओं जैसे नाटक, एकांकी, उपन्यास, कहानी, जीवनी, संस्मरण व बाल साहित्य आदि पर लिखा हैइन सभी रचनाओं की विशेषताएं इत्यादि के बारे में बताया गया है। तीसरा अध्याय 'सामाजिक यथार्थ:- स्वरूप एवं परिभाषा' में समाज का अर्थ एवं परिभाषा, यथार्थ का अर्थ एवं परिभाषा,

यथार्थ और यथार्थवाद, सामाजिक यथार्थ का स्वरूप एवं परिभाषा आदि विषयों पर विचार किया गया है। चौथा अध्याय 'विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ' में विष्णु प्रभाकर की कहानियों में व्याप्त सामाजिक यथार्थ का विवेचन एवं विश्लेषण विस्तार से किया गया है, इसमें विष्णु प्रभाकर की कहानियों में सांप्रदायिकता, भ्रष्टाचार, जाति प्रथा, पारिवारिक विघटन, पीढ़ी संघर्ष, नारी शोषण गरीबी आदि जैसी सामाजिक समस्याओं का विश्लेषण किया गया है। पांचवा अध्याय 'निष्कर्ष' में संपूर्ण शोध का निष्कर्ष प्रस्तुत करके शोध संभावनाओं पर विचार किया गया है।

आधार ग्रंथ:

विष्णु प्रभाकर, विष्णु प्रभाकर संकलित कहानियां, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, 2009

सन्दर्भ सूची:

1. शिव कुमार मिश्र, साहित्य और सामाजिक सन्दर्भ, प्रशासन संस्थान,2012 पृ.12
2. वही
3. डॉ सुमा.रोडनवर, विष्णु प्रभाकर के कथा साहित्य में सामाजिकता. रामदेवी कानपुर: अलका प्रकाशन 34/6 एच. ए. एल. कोलोनी, 2005
4. वही
5. वही
6. डॉ. सविता जनार्दन सबनीस, विष्णु प्रभाकर का कहानी साहित्य, कानपुर प्रकाशन साहित्य नगर 128/23R रविंद्र नगर, यशोदा नगर
7. डॉ. के. पी. शहा, विष्णु प्रभाकर की कथा साहित्य का अनुशीलन, संभावना प्रकाशन, हापुड़, 1983
8. डॉ. महीप सिंह, विष्णु प्रभाकर व्यक्ति और साहित्य, संचेतन (साहित्यिक पत्रिका), 2017
9. डॉ. रघुवर दयाल, हिंदी कहानी बदलते प्रतिमान,दृष्टि 64, प्रथम तल, डॉ मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009

शोध प्रबंध:

- डॉ वंदना, विष्णु प्रभाकर के साहित्यिक कृतित्व का विश्लेषण आत्मक अनुशीलन।
- कुमारी प्रीति, विष्णु प्रभाकर की कहानियों में सामाजिक, राजनीतिक यथार्थ एवं मनोवैज्ञानिक संदर्भ, ललित नारायण, मिथिला विश्वविद्यालय कामेश्वरनगर।
- विष्णु प्रभाकर की कहानियों में काथ्यगत यथार्थबोध, बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्याल, मुजफ्फरपुर
- ज्ञानेश्वर कुमार गुप्ता, विष्णु प्रभाकर की कहानियों में यथार्थबोध, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर, बिहार विश्वविद्यालय

द्वितीय अध्याय

विष्णु प्रभाकर:सामान्य परिचय

विष्णु प्रभाकर का सामान्य परिचय:

2.1 प्रस्तावना:-

विष्णु प्रभाकर एक साहित्यकार होने के साथ-साथ एक अच्छे व्यक्ति के रूप में हिंदी जगत में प्रसिद्ध है। हिंदी साहित्य जगत में विष्णु प्रभाकर का नाम बड़े आदर और सम्मान के साथ लिया जाता है। उन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से पाठक वर्ग के दिलों और दिमाग में अपना स्थान बना लिया है। बड़ी कुशलता से उन्होंने एक साथ कहानी, उपन्यास, जीवनी, संस्मरण, एकांकी, नाटक तथा बाल साहित्य लिखा हैं। ऐसा लगता है कि उनका साहित्य ही उनका जीवन है। विष्णु प्रभाकर स्वभाव से अत्यंत सरल है। हिंदी के गद्य विधा में विष्णु प्रभाकर एक श्रेष्ठ कहानीकार, प्रख्यात उपन्यासकार, एवं रंगमंचीय एकांकीकार और नाटककार थे। साथ-साथ बाल साहित्यकार के रूप में उनकी अलग पहचान थी। उन्होंने अपने साहित्य में मानव मन के द्वंद, संघर्ष, घात-प्रतिघात, आनंद, उत्सव आदि का सहज रूप से वर्णन किया है। मानवता एवं संवेदनशीलता उनमें भरी हुई है। उन्होंने अपनी रचनाओं के द्वारा समाज और व्यक्ति का संबंध स्थापित किया है। ऐसे साहित्यकार का व्यक्तित्व जानना अति आवश्यक होता है। उनके व्यक्तित्व के पहलू इस प्रकार है:-

2.2 जन्म:-

विष्णु प्रभाकर का जन्म 21 जुन सन् 1912 ई. तद्नुसार आषाढ़ शुक्ल सप्तमी को प्रातः काल के समय उत्तर प्रदेश के पश्चिम विभाग के जिला मुजफ्फरनगर के अन्तर्गत मीरापुर कस्बे में हुआ था। यहाँ पर उनके पूर्वज लगभग 150 वर्ष पूर्व आकर बस गये थे। विष्णु प्रभाकर का संयुक्त परिवार था। उन्होंने अपने बचपन के 11 वर्ष इसी संयुक्त परिवार में बिताये, जो आज भी उनके लिए अनमोल है। उनके पिता का नाम श्री दुर्गाप्रसाद और माता का नाम महादेवी

था। उनके दादा चिरंजीलाल 'मुरब्बी' नाम से प्रसिद्ध थे। विष्णु प्रभाकर अपने माता-पिता की दूसरी संतान थे।

2.3 बचपन:

विष्णु प्रभाकर ने अपने बचपन के बारह साल अपनी माँ के साथ मीरापुर में ही बिताये। घर में सब उनसे बहुत प्यार करते थे, बड़े लाड़-प्यार से उनकी परवरिश हुई। विष्णु प्रभाकर को पढ़ने का शौक बचपन से ही था। उनके पिताजी की एक छोटी-सी तम्बाकु की दुकान थी और दुकान में एक टोकरे में किताबें भरी हुई थी। अक्षर ज्ञान प्राप्त होने के बाद विष्णु ने इसका अध्ययन लगन के साथ किया। विष्णु ज्ञान की धारा में डुबे रहते थे, लेकिन गाँव में शिक्षा का प्रबन्ध बहुत कम था, इसलिए उन्हें अपनी आगे की पढ़ाई के लिए गांव के बाहर जाना जरूरी था। उनकी मां ने बडे चाव के साथ विष्णु प्रभाकर को आगे की पढ़ाई पूरी करने के लिए अपने मामा के घर हिसार में भेज दिया। विष्णु प्रभाकर अपने शब्दों में लिखते हैं, ‘‘मुझे आगे पढ़ने के लिए गाँव छोड़कर जाना पड़ा। आँखों में आँसू भरकर स्वयं मेरी माँ ने यह कहते हुए हम दोनों भाइयों को अपने से दूर कर दिया था कि राम-लक्ष्मण को बनवास दे रही हूँ जिससे वे कुछ बन सके।"[1]

विष्णु प्रभाकर को बचपन से ही किताबें पढ़ना बहुत अच्छा लगता था, और जब वह अपने मामा के घर गए तब उनके लिए सोने पर सुहागा जैसी बात हो गई उन्होंने अपने मामा के घर जाकर देखा तो उनके घर बहुत किताबें थी, उतनी कि मानो यहां किताबों का भंडार ही था। इतनी सारी किताबों को देखकर उनका मन प्रसन्न हो गया। उनके ज्ञान की इच्छा ने बहुत जोर पकड़ा। विष्णु प्रभाकर लिखते हैं, ‘‘माँ कहा करती थी कि बचपन में मुझे पढ़ने का बहुत चाव था। इस क्षेत्र में स्वयं वही मेरी आदि गुरू थी। वह अपने मायके से दहेज में पुस्तकों का

एक बक्सा लाई थी। उन्हीं को फाड़-फाड़कर मेरे बालक मन में छपे अक्षरों के प्रति पूजा की सीमा तक मोह पैदा हो गया था। सोचा करता था कौन बनाता है, इन्हें कैसे बनाता है?"[2]

विष्णु प्रभाकर अपने मामा के घर रहते थे। वह एक क्लर्क होने के साथ-साथ आर्य समाज के कट्टर अनुयायी भी थे। मामा के घरमें रहने से वहां के वातावरण में रहने के कारण उनका जिज्ञासु मन कुछ नया ग्रहण करने लगा। विष्णु प्रभाकर उसे वातावरण से पूरे प्रभावित हुए, परिणामस्वरुप उनके मन की भ्रमित मान्यता से परे होकर वह खुद आर्य समाजी बन गए। शायद यही से उनके सुंदर एवं शुद्ध जीवन का सूर्योदय हुआ।

विष्णु प्रभाकर को कदम कदम पर संकटों का सामना करना पड़ा। उनके साहित्य को पढ़कर या उनकी पूरी कथा व्यथा को पढ़कर पाठक को प्रेरणा मिलती है। विष्णु प्रभाकर सचमुच एक समंदर के एक अनमोल मोती की तरह थे।

2.4 पारिवारिक वातावरण:

विष्णु प्रभाकर का संयुक्त परिवार था। उनकी परवरिश संयुक्त परिवार में हुई थी। पिताजी का परिवार बहुत बड़ा था, कई भाई-बहन थे। एक बहन की मृत्यु बचपन में हो गई थी, बड़े होने पर एक भाई की भी मृत्यु हो गई। उनका पारिवारिक जीवन काफी दु:खमय था, लेकिन उनका संयुक्त परिवार होने के कारण सभी लोग एक दूसरे के सुख-दुख के साथी थे। विष्णु प्रभाकर अपनी एक चाचा से बेहद लगाव रखते थे, जो एक प्रतिभाशाली व्यक्ति होने के साथ-साथ एक देशभक्त योद्धा भी थे। विष्णु प्रभाकर अपने चाचा के साथ मिलकर देशभक्ति की बातें किया करते थे। विष्णु प्रभाकर के मन में देशभक्ति का बीज उन्होंने ही बोया था। सन 1924 के समय भारत में प्लेग की बीमारी ने भयंकर रूप धारण कर लिया था। उसकी चपेट

में अनेक लोग आ गए थे, उन सभी मे विष्णु प्रभाकर के चाचा भी उसका शिकार बन गए थे। चाचा के चले जाने के बाद विष्णु प्रभाकर के संयुक्त परिवार की आर्थिक स्थिति डावांडोल हो गई, और बाद में उनके परिवार को बहुत मुसीबतों का सामना करना पड़ा। विष्णु प्रभाकर का पारिवारिक जीवन संघर्षमय था।

विष्णु प्रभाकर आजीविका की तलाश में दिल्ली के कुण्डेलवालन मे आ बसे और यही के होकर रह गए थे। वैसे तो विष्णु प्रभाकर का घर बड़ा और काफ़ी पुराना था। कितने आश्चर्य की बात थी कि इतने बड़े साहित्यकार ऐसी गली में रहते थे, जहां पत्थर की कुण्डिया बेचने वाले रहते थे। उनकी खटपट के बीच यहां महान लेखक अपनी रचनाएँ कैसे लिखते होंगे?

विष्णु प्रभाकर का जन्म एक मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ और वे आजीवन मध्यवर्गीय इंसान बनकर रहना चाहते थे। इतने बड़े लेखक होते हुए भी वे हमेशा सादगी भरा जीवन जीना चाहते थे। उनका परिवार अब ऊपरी तौर पर संयुक्त ही लगता था, लेकिन अंदर सब अपनी गृहस्थि अलग किए हुए थे। विष्णु प्रभाकर के परिवार की आर्थिक स्थितियां कमजोर होते हुए भी सभी अपने कर्म क्षेत्र में व्यस्त थे।पारिवारिक स्थितियाँ कमजोर होते हुए भी उनके परिवार वालों ने उनकी रुचि साहित्य की ओर देखकर उनका हौसला बढ़ाया।

उनकी पत्नी सुशीला जब तक थीं, तब तक परिवार की बागडोर उन्होंने खुद ने ही संभाली हुई थी, उनके चले जाने के बाद परिवार की बागडोर उनके बहू-बेटों ने संभाली। विष्णु प्रभाकर के सभी बच्चे शादी-शुदा और नौकरी पेशा वाले हैं, फिर भी विष्णु प्रभाकर घर-खर्च दे देते थे, वह अपने जीवन के अंत तक काम करते रहे वे सबसे अधिक मेहनती थे।

2.5 साहित्य के प्रेरणा स्त्रोत:

विष्णु प्रभाकर को पढाई का चाव पिता की दुकान पर रखी पुस्तकों से भरी टोकरी से उत्पन्न हुआ। इसके अतिरिक्त विष्णु प्रभाकर ने माँ के बक्से की पुस्तकें भी फाड़-फाड़ कर पढ़ी थीं। उनमें अधिक पुस्तकें धार्मिक थीं। 1926 में जब विष्णु प्रभाकर 8 वीं कक्षा में थे तो बालसखा पत्रिका के लिए एक पत्र लिखा, जो छपा भी था। दरअसल लेखक बनने की शुरुआत यहीं से हुई।

विष्णु प्रभाकर बचपन से ही मेधावी छात्र रहे थे। मैट्रिक तक आते-आते उनके परिवार की स्थिति डाँवाडोल हो गई और उन्हें पढ़ाई मंझधार में छोड़कर नौकरी करनी पड़ी, वह भी 24 घंटों की सरकारी नौकरी। इतना होते हुए भी उन्होनें अपनी पढ़ाई को अधूरा नहीं छोड़ा। नौकरी और गृहस्थी के तनाव भरी जिंदगी ने उन्हें लेखक बनने पर मजबूर कर दिया।

विष्णु प्रभाकर के परिवार वालों ने भी उनकी रुचि साहित्य की ओर देखकर उनका हौसला बढ़ाया। विष्णु प्रभाकर अपनी छुट-पुट रचनाएँ पत्रिकाओं के लिए भेजते रहते थे। 1934 में वे लेखनी के क्षेत्र में जमकर लिखने लगे तो कुछ लेखकों ने इनको अपनी कहानी सुधारने का सुझाव भी दिया। चन्द्रगुप्त ने इनकी कहानियों को सराहा और मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करने का सुझाव दिया। यही सुझाव विष्णु प्रभाकर के लिए सम्बल बन गया प्रारंभ में साहित्यिक जीवन में "आर्यमित्र" के सम्पादक पंडित हरिशंकर शर्मा से भी विष्णु प्रभाकर को काफ़ी प्रेरणा मिली।

लेखक बनने की प्रेरणा की बात कहते हुए विष्णु प्रभाकर आगे कहते है - "आज के युग में अकेले आदमी का संघर्ष कैसा भयानक होता है, यह वही जान सकता है जो सचमुच

अकेला है। जो न किसी पद पर है, न किसी दल में, जो किसी का भी नहीं है और जो पलायन को आत्मरति की संज्ञा देता है फिर भी जी रहा हूँ। इस जीने पर कभी-कभी अचरज होता है। और भविष्य के प्रति आशंका भी, लेकिन तीस वर्ष बाद आज के इस बदले हुए युग में जब भी अपनी प्रारंभिक काल पर दृष्टि डालता हूँ, तो एक अनोखी गति से भर उठता हूँ। उसी तरह लेखक बनने की प्रेरणा पाता हूँ। इसी प्रयत्न में मेरी सार्थकता है।"[3] इतना ही नहीं उनके साहित्य-सृजन की प्रेरणा देश-विदेश में घूमने की भी रही है।

प्रख्यात लेखक, साहित्यकार और पद्म भूषण पुरस्कार विजेता विष्णु प्रभाकर का 11 अप्रैल 2009 शनिवार को नई दिल्ली में हुआ।

2.6 कृतित्व:

विष्णु प्रभाकर एक बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार थे। साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में उन्होंने अपनी कलम चलाई और सफलता भी प्राप्त की है। विष्णु प्रभाकर हिन्दी साहित्य के उन रचनाकारों में गिने जाते हैं जिनके व्यक्तित्व और कृतित्व में तरुण की सी भावमयता तथा प्रौढ़ सदृश्य गंभीरता है। मानवीय मूल्य उनकी कला की रचनात्मक अनुभूति बन जाते हैं। उन्होंने निम्नलिखित विधाओं में कलम चलाई है-

1. कथासाहित्य, 2. नाटक-एकांकी, 3. जीवनीसंस्मरण, 4. बालसाहित्य

2.7 कथा साहित्य:

विष्णु प्रभाकर का कथा साहित्य बहुत ही समृद्ध और विशाल है। इसी के अन्तर्गत हम कहानी और उपन्यास दोनों साहित्य को ले सकते हैं। साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में उन्होंने लेखनी चलाई पर प्रसिद्धी उन्हें नाटक के माध्यम से ही प्राप्त हुई। साहित्य के क्षेत्र में उनका पदार्पण

कहानी के माध्यम से ही हुआ था। सन् 1938 में उन्होनें अपनी पहली कहानी लिखी "हमें गिराने वाले" यह कहानी मजदूरों की व्यथा वेदना को लेकर लिखी गई थी। इस कहानी में मजदूरो को गिराने वाला मजदूरों का नेता है वह पूँजीपति भी हो सकता है या अन्य कोई भी। विष्णु प्रभाकर की कहानियों में मध्यवर्गीय चेतना की शुरुआत इसी कहानी से हुई है। इसका निर्वाह आगे की कहानियों में भी मिलता है। इसके बाद उन्होंने विविध विषयों को लेकर कहानी लिखी। कहानी के क्षेत्र से उन्होंने अपनी कलम का रुख उपन्यास क्षेत्र की ओर किया लेकिन कहानियों की तुलना में उनके उपन्यास अपेक्षाकृत बहुत कम है।

2.8 कहानी साहित्य:

विष्णु प्रभाकर अपने को तीसरे दशक का कहानीकार मानते थे। स्वतंत्रता पूर्व से यानी सन् 1938 में उन्होंने अपनी प्रथम कहानी लिखी और अब तक आते-आते इन कहानियों की संख्या 300 से भी ज्यादा हो गयी। इन कहानियों में परंपरागत जीवन मूल्यों के उदय के फलस्वरूप उत्पन्न टकराहट की गूंज सुनाई देती है। उनकी कहानियों में अधिकतर मानवीय मूल्यों की चर्चा ही अधिक मिलती है। विष्णु प्रभाकर ने कहा भी है कि "मेरी अधिकतर कहानियाँ मनुष्य व मानवता की है। मनुष्य व मानवता में ही मेरी अधिक रुचि रही है।“4 उनकी कहानियों के संग्रह निम्नलिखित हैं–

आदि और अंत, रहमान का बेटा, जिन्दगी के थपेड़े, धरती अब भी घूम रही है, संघर्ष के बाद (पुरस्कृत), सफर के साथी, खंडित पूजा (पुरस्कृत), सांचे और कला, मेरी तैंतीस कहानियाँ, मेरी प्रिय कहानियाँ, पूल टूटने से पहले, मेरा वतन, खिलौने, मेरी लोकप्रिय कहानियाँ, इक्यावन कहानियाँ, मेरी कथा यात्रा, एक और कुन्ती, जिन्दगी और रिहर्सल, मेरी

कहानियाँ, एक आसमान के नीचे, मेरी प्रेम कहानियाँ, चर्चित कहानियाँ, कर्फ्यू और आदमी, दस प्रतिनिधि कहानियाँ।

2.9 उपन्यास:

कहानी साहित्य की अपेक्षा विष्णु प्रभाकर ने उपन्यास साहित्य बहुत कम लिखें है फिर भी उनके अनुसार यथार्थ प्रकट करने का उपन्यास एक सशक्त माध्यम है। इस यथार्थ की झलक उनके उपन्यासों में सर्वत्र बिखरी पड़ी है। उस समय देश के अस्वाभाविक विभाजन ने भी स्त्री सम्बन्धी अनेक समस्याओं को जन्म दिया। यों तो देश का विभाजन एक राजनीतिक प्रक्रिया थी, परन्तु उसका सामाजिक पक्ष अपेक्षाकृत अधिक मार्मिक था। स्वतंत्रता प्राप्ति और देश के विभाजन के साथ ही मार-काट, लूटमार, बलात्कार आदि का जो नग्न तांडव हुआ, उसकी शिकार स्त्रियाँ ही अधिक हुई। इन शोषित स्त्रियों को ही विष्णु प्रभाकर ने अपने उपन्यास का आधार बनाया। मध्यमवर्गीय स्त्री की पीड़ा कितनी मार्मिक है इसकी झलक "तट के बंधन" उपन्यास में देखा जा सकता हैं।

"निशिकान्त" उपन्यास में निम्न मध्यवर्ग के जीवन संघर्ष और संघर्ष के साथ प्रेम का सुन्दर चित्रण देखने को मिलता है। "कोई तो" उपन्यास मध्यमवर्गीय नैतिकता का पर्दाफाश करने वाला है, ऊपरी तौर पर देखा जाए तो विष्णु प्रभाकर ने स्त्री के मर्म को लेकर ही उपन्यास लिखे हैं, और इस क्षेत्र में सफलता भी हासिल हुई है। इसका जीता-जागता उदाहरण "अर्द्धनारीश्वर" उपन्यास है। निशिकान्त, तट के बन्धन, स्वप्नमयी, दर्पण का व्यक्ति, कोई तो, अर्द्धनारीश्वर उपन्यास लिखे हैं।

इसके अतिरिक्त उन्होंने तीन लघु उपन्यासों को मिलाकर उसे 'संकल्प' नाम दिया।

2.10 नाटक:

विष्णु प्रभाकर की ख्याति हिन्दी साहित्य में नाटक के माध्यम से हुई। सन् 1957 से लेकर अब तक वे इस क्षेत्र में लेखनी के बल पर डटे हुए हैं।विष्णु प्रभाकर उनके नाटकों में जीवन के विविध पक्षों का, विविध समस्याओं का चित्रण मिलता है। विष्णु प्रभाकर के नाटकों का वर्गीकरण हम पाँच भागों में कर सकते हैं जैसे-

1. मनोवैज्ञानिक नाटक, 2. ऐतिहासिक नाटक, 3.राजनीतिक नाटक, 4. सामाजिक नाटक

मनोवैज्ञानिक नाटक:- विष्णु प्रभाकर अनुभवी नाटककार होने के नाते उन्होंने नाटक की समस्याओं की गहराइयों तक जाकर उन समस्याओं का गहन अध्ययन करके मनोवैज्ञानिक नाटक लिखे हैं, जो बेहद सफल हुए हैं। निम्नलिखित नाटकों को मनोवैज्ञानिक नाटक की श्रेणी में रखा जा सकता है।

जैसे:- डाक्टर, बन्दिनी, टगर।

ऐतिहासिक नाटक उसे कहते हैं, जिसमें ऐतिहासिक कथा का सहारा लिया जाता है इनमें प्रमुख नाटक इस प्रकार हैं- नव-प्रभात, समाधि

उन्होंने अनेक प्रसिद्ध कहानियों और उपन्यासों का सफल नाट्य रूपान्तर भी किया है। इस प्रकार के नाटक को रूपान्तरित नाटक के अन्तर्गत रखते हैं, जैसे- "गबन" का नाट्य रूपान्तर "चन्द्रहार", प्रेमचन्द के उपन्यास "गोदान" का नाट्य रूपान्तर "होरी" आदि।

राजनैतिक नाटक और सामाजिक नाटक स्वाधीन भारत के सामाजिक और राजनीतिक जीवन से सम्बन्ध रखते हैं, जैसे–कुहासा और किरण, सत्ता के आर-पार। सामाजिक नाटक जैसे, टूटते परिवेश, युगे युगे क्रांति

2.11 एकांकी

विष्णु प्रभाकर की कहानियों में संवाद की अधिकताओं देखकर माचवे ने उन्हें एकांकी लिखने को उकसाया। उन्हीं की प्रेरणा पाकर विष्णु प्रभाकर ने सन 1939 में "हत्या के बाद एकांकी लिखी, लेकिन यह कला दृष्टि से दुर्बल था। आजादी के बाद आकाशवाणी से जुड़ने के कारण उनकी कला में निखार आया। उनका संसार ध्वनि, नाट्य रूपक तक सीमित था। ने रंगम की ओर सचेस्ट होने के प्रयत्न में सफल हुए है। उनके एकांकी संग्रह की सूची निम्नलिखित है:-

इन्सान और अन्य एकांकी, अशोक और सत्य, प्रकाश और परछाई, एक लिंकन, विद्रोह, ये रेखाएं ये दायरें, तीसरा आदमी, ऊंचा पर्वत गहरा सागर, मेरे प्रिय एकांकी, मेरे श्रेष्ठ एकांकी, नए एकांकी, डरे हुए लोग।

2.12 जीवनी संस्मरण:

विष्णु प्रभाकर ने जीवनी और संस्मरण के क्षेत्र में भी अच्छा प्रयास किया है। "आवारा मसीहा" जो कि बंगला-साहित्य के प्रसिद्ध लेखक शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय जी के जीवन पर आधारित है, जिसे लिखने में उन्हें 14 वर्ष लगे और इसी ने उन्हें जीवनीकार के रूप में खूब ख्याति दिलवायी है। उन्होंने आवारा मसीहा के नाम से शरतचन्द्र की जीवनी को बड़ी कलात्मकता के साथ लिखा है। "आवारा मसीहा" का सबसे प्रमुख महत्व इस बात पर है कि शरत के महान आदर्श चरित्र को कलंकित करने वाली घोर काली बाढ़, बंगाल के सस्ते किस्म के सनसनीप्रिय साहित्यिक नामधारी लेखकों द्वारा लिखित जो तथाकथित जीवनियाँ "बंगालेतर प्रदेशों में बड़ी तेजी से फैलती चली जा रही थीं, उनके विरुद्ध विष्णु प्रभाकर ने एक

चट्टानी (या लौह) दीवार खड़ी कर दी है। यह अपने आप में एक बहुत बड़े पराक्रम, बल्कि विक्रम का काम है।"5 आवारा मसीहा का प्रकाशन ऐसे समय हुआ जब शरत-साहित्य से परिचय हिन्दी पाठकों को हो चुका था, फिर भी यह पुस्तक आज भी हर दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

'जीवनी' की तरह ही उनका 'संस्मरण' क्षेत्र भी काफ़ी समृद्ध है- नाना व्यक्तियों के संस्मरण उन्होंने लिखे हैं। इसमें देश के व्यक्ति भी हैं और विदेश भी हैं। संस्मरण ऐसा होना चाहिए जिसमें किसी भी व्यक्ति की अच्छाई और बुराई दोनों पहलुओं पर प्रकाश डालना चाहिए। अगर लेखक केवल व्यक्ति की अच्छाई को लेकर ही लिखता है तो उससे जीवन की वास्तविकता धूमिल हो जाती है।

उनके जीवनी और संस्मरण-संग्रह इस प्रकार हैं:-जाने-अनजाने, कुछ शब्द कुछ रेखाएं, अमर शहीद भगत सिंह, सरदार बल्लभ भाई पटेल, आवारा मसीहा, यादों की तीर्थयात्रा, शुचि स्मिता (संपादित), राह चलते-चलते, काका कालेलकर, स्वामी दयानन्द सरस्वती, विष्णु प्रभाकर-लघु कहानियाँ आदि।

2.13 निबंध:

विष्णु प्रभाकर को समय-समय पर साहित्य सम्बन्धी अनेक विषयों पर लिखना और बोलना पड़ा है, उन्हीं लेखों, भाषणों और वार्ताओं में से कुछ को उन्होंने निबन्ध का आधार बनाया है। जैसे –

जन-समाज और संस्कृति - एक समग्र दृष्टि, क्या खोया क्या पाया, जन-समाज और स्मृति आदि।

2.14 यात्रा-वृतांत:

विष्णु प्रभाकर यायावर प्रवृत्ति के व्यक्ति माने जाते हैं। यात्रा करना उनका शौक रहा था। उन्होंने देश विदेश की सैर की है, फिर भी हिमालय की यात्रा करने पर उन्हें बहुत आनन्द मिलता, विष्णु प्रभाकर ने हिमालय की अनेक यात्राएं की थी। इनकी साहित्यिक वृत्ति और यायावरी प्रवृत्ति ने हिमालय का और अन्य जगहों का अनेक रंगों और रूपों में दर्शन किया है। उसी संदर्भ को पुस्तकों के रूप में ढाला है। उनके यात्रा वृत्तान्त पर लिखी पुस्तकें निम्नलिखित हैं-जमुना गंगा के नहर में, अभियान और यात्राएं, हँसते निर्झर दहकती भट्टी।

2.15 लघुकथा:

विष्णु प्रभाकर ने लघुकथाएँ लिखी हैं जो बहुत ही कम हैं। उनकी कुछ लघु कथाएं प्रसिद्ध है।

जैसे:- आपकी कृपा है, कौन जीता कौन हारा।

2.16 बाल साहित्य

इन विधाओं के अतिरिक्त उन्होंने बाल साहित्य भी लिखा है। हिन्दी में बाल-साहित्य को नई दिशा देकर उसे समृद्ध एवं सम्पन्न बनाने और बच्चों तक पहुँचाने में जिन लेखकों ने सफलता प्राप्त की है, उनमें विष्णु प्रभाकर का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इस विधा को आधुनिक जीवन मूल्यों और परिवेश के संदर्भ में प्रस्तुत किया है। बाल साहित्य के अन्तर्गत कहानी, नाटक, एकांकी आदि का सृजन उन्होंने किया है।

2.17 पुरस्कार, पदक, सम्मान:

विष्णु प्रभाकर जी को उनकेसाहित्य कार्य के लिए अनेक पुरस्कार भी प्राप्त हुए। देश विदेश में उनका सम्मान भी किया गया है।

1. पाब्लो नेरुदा सम्मान (प्रशस्ति पत्र) इंडियन राइटर्स एसोसिएशन 1974 - 75 (आवारा मसीहा)।

2. सोवियत लैंड नेहरु पुरस्कार 1976 में लिए। आवारा मसीहा " के लिए

3. "तुलसी पुरस्कार" उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ द्वारा सन् 1976 में "आवारा मसीहा" के लिए।

4. "राष्ट्रीय एकता पुरस्कार" 1980 (स्व० दशरथ मल सिंघवी की स्मृति में)।

5. "विशिष्ट साहित्यकार सम्मान" साहित्यकला परिषद, दिल्ली।

6. "सत्ता के आर - पार" पर 1988 को "मूर्ति देवी" पुरस्कार, भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा।

7. अखिल भारतीय हिन्दी सेवी साहित्यकार "1991" का सम्मान महाराष्ट्र हिन्दी साहित्य अकादमी द्वारा।

8. नागरिक परिषद दिल्ली द्वारा "विशिष्ट सेवा सम्मान" 1990

9. अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ, नई दिल्ली द्वारा वर्ष 1990 का सम्मान।

10. "अर्द्धनारीश्वर" (उपन्यास) के लिए 1993 का साहित्य अकादमी दिल्ली से पुरस्कार मिला।

2.18 निष्कर्ष:

विष्णु प्रभाकर ने अपने साहित्य में जीवन के विविध पक्षों को उजागर किया है। उनका साहित्य विविध रंगों से युक्त हैं। उनकी कहानीयाँ मध्यवर्ग के जीवन के सहज मनोविज्ञान को प्रस्तुत करती हैं। उपन्यासों के अन्तर्गत उन्होंने प्राचीन परंपराओं तथा रूढ़ियों को तोड़ने का भरपूर प्रयास किया है। उनके कथा-साहित्य ने सामाजिक जीवन की विविध समस्याओं को छुआ है। उदाहरण हिन्दू-मुस्लिम, एकता, अज्ञान, राजनीतिक आंदोलन, नारी समस्या, मध्यवर्गीय विचार आदि समस्याओं का वर्णन हमें प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में देखने को मिलता है। नाटक के क्षेत्र में देखते हैं तो लगता है कि विष्णु प्रभाकर ने साहित्यिक प्रचलित भाषा को लेकर नाटकों की रचना रंगमंच के अनकूल की है। उन्होंने अपने नातकों को तीन अंकों में विभाजित किए है और दृश्य भी सीमित ही रखे हैं। कई नाटकों ने तो हिन्दी रंगमंच के क्षेत्र में तहलका मचा दिया है जैसे 'डाक्टर', 'युगे युगे क्रांति','टगर' और 'होरी'।

उन्होंने अपने एकांकियों द्वारा मनुष्य की रुचि, भावनाओं, उनकी उलझनों और संघर्षों के तार-तार को सुलझाने की चेष्टा की है। इनके एकांकियों में युग तथा देश की हलचलों का चित्रण और मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि इनकी विशेषताएं हैं। जीवन और संस्मरण के क्षेत्र में "आवारा मसीहा" ने आधी प्रसिद्धि जीवनीकार के रूप में दिलवायी है। अब रहा बाल साहित्य का क्षेत्र। उसमें उन्होंने लोक-कथा, परीकथा, राजा-रानी की कहानियों को अपने बाल साहित्य का क्षेत्र न बनाकर इससे कुछ हटकर बच्चों के लिए वास्तविक जीवन-मूल्यों के लिए लिखना अधिक स्वीकार किया है। उन्होंने आज के आधुनिक एवं वैज्ञानिक युग के सत्य को लेकर ही लिखा है।

विष्णु प्रभाकर की रचनाओं का अनुवाद देशी-भाषाओं में ही नहीं, विदेशी भाषाओं में भी हो रहा है। उनकी 27 कहानियों का एक संग्रह तथा एक नाटक रूसी भाषा में प्रकाशित हुआ है। बर्मा, श्रीलंका, इंग्लैण्ड आदि कई देशों में इनके नाटक अनूदित होकर प्रसारित हुए हैं। जिस प्रकार "आवारा मसीहा" का अनुवाद भारत की सभी प्रमुख भाषाओं में हुआ है, उसी प्रकार "अर्द्धनारीश्वर" का अनुवाद प्रमुख भारतीय भाषाओं के साथ-साथ चीनी भाषा में भी हुआ हैं। उनकी विशेष कृतियाँ हैं -

1. आवारा मसीहा (जीवनी), 2. सत्ता के आर-पार (नाटक), 3. अर्द्धनारीश्वर (उपन्यास)

विष्णु प्रभाकर ने नाटक एकांकी, उपन्यास, बाल साहित्य कहानी के अतिरिक्त अन्य विधाओं में भी रचनाएं की हैं। जिनमें यात्रा-वर्णन, रेखाचित्र, संस्मरण और आत्मकथा है। घुमक्कड़ प्रकृति के कारण उन्होंने देश भर का भ्रमण किया और उन्ही अनुभवों के आधार पर अपनी सभी रचनाओं का सृजन किया है।

सन्दर्भ सूची:

1. डॉ. महीप सिंह, विष्णु प्रभाकर व्यक्ति और साहित्य, संचेतन (साहित्यिक पत्रिका), 2017, पृ.स.18
2. वही पृ.स.21
3. वही पृ.स.51
4. डॉ. राजलक्ष्मी नायडू, विष्णु प्रभाकर- व्यक्तित्व और कृतित्व, श्री राजीव दीक्षित, 2014
5. डॉ. महिप सिंह, विष्णु प्रभाकर व्यक्ति और साहित्य, संचेतन (साहित्यिक पत्रिका), 2017, पृ.स.183

तृतीय अध्याय

सामाजिक यथार्थ: अवधारणा एवं स्वरूप

3. सामाजिक यथार्थ: अवधारणा एवं स्वरूप:

3.1 प्रस्तावना:

साहित्य को मानव जीवन और उसकी आसपास की व्यापक सृष्टि का कलात्मक रूप कहां गया है, क्योंकि उसमें समाज और समाज में रहने वाले लोगों का व्यापक जीवन उपलब्ध होता है। समाज और साहित्य एक दूसरे के पूरक होते हैं, क्योंकि समाज की गतिविधियों से साहित्य प्रभावित होता है। एक साहित्यकार जो कुछ अपने साहित्य में लिखता है, वह समाज का ही एक प्रतिबिंब होता है। साहित्य की मदद से एक साहित्यकार अपनी भावनाओं को समाज के सामने लाता है। साहित्यकार समाज में रहता है समाज में होने वाली सारी घटनाओं का उस पर प्रभाव होता हैऔर वह सारी सामाजिक घटना कहीं ना कहीं उसके साहित्य पर प्रभाव डालती है। सभी सामाजिक भावनाएं जैसे राग, प्रेम, उत्साह आदि भावनाएं एक साहित्यकार की साहित्य में झलकती है तथा उसके साहित्य में जान डालती हैं। साहित्य समाज का दर्पण होता है और इस दर्पण में समाज के हर छवि चाहे वह अच्छी हो या बुरी हो वह दिखाई देती है। इस प्रकार साहित्य समाज के विभिन्न पहलुओं को समझने और उन पर विचार करने का माध्यम बनता है, जिससे समाज में परिवर्तन आ जाता है।

साहित्यकार अपने जीवन में जो कुछ अनुभव करता है वह उसे साहित्य में पिरोता है। वह समझ में इर्द-गिर्द घटित घटनाओं को बहुत बारीकी से देखता है महसूस करता है, उसका अनुभव लेता है और जब वह अनुभूति पूरी हो जाती है तब उसे रूपाकार देता है। साहित्यकार अपनी रचनाओं में समाज की वास्तविकता का चित्रण करता है उसे ही यथार्थ कहते हैं।

सामाजिक यथार्थ में जीवन का वास्तविक अंकन और समाज का नज़रिया, दोनों होते है। सामाजिक यथार्थ साहित्य को समृद्ध बनता है। आधुनिक साहित्य में सामाजिक यथार्थ को संपूर्णता में उभरकर प्रस्तुत किया गया है, इस युग के लेखकों ने समाज में घटित होनेवाली घटनाओं का वास्तविक चित्रण अपने साहित्य में किया है। सामाजिक यथार्थ के व्यापक अर्थ एवं स्वरूप पर यहां प्रकाश डाला जा रहा है।

समाज और सामाजिक यथार्थ एक दूसरे से घनिष्ठ संबंध होता है, क्योंकि सामाजिक यथार्थ को समझने के लिए समाज क्या है यह जानना अति आवश्यक होता है। तत्कालीन समाज को समझे बिना हम सामाजिक यथार्थ की विवेचना करने में समर्थ नहीं हो सकते। अतः सामाजिक यथार्थ को जानने से पहले समाज क्या है यह जानना अत्यंत आवश्यक होता है।

3.2 समाज अर्थ एवं परिभाषा:

3.2.1 समाज का अर्थ:

समाज का शाब्दिक अर्थ है:- “संस्था, सहचार्य संगत”[1] “समूह, एक स्थान पर रहने वाला एक ही प्रकार का कार्य करने वाले लोगों का वर्ग, दल या समूह, या किसी विशेष उद्देश्य से स्थापित हुई सभा, सोसाइटी”[2]

"समाज" का अर्थ है एक स्थान पर रहने वाले अथवा एक ही प्रकार के कार्य करने वाले लोगों का वर्ग, दल या समूह। साधारणतया समाज शब्द से व्यक्तियों के समूह को समझा जाता है। अधिकांश समाज दार्शनिकों ने भी इसका प्रयोग इसी अर्थ में किया है। इस अर्थ में प्रयोग करने से इस शब्द का कोई भी निश्चित अर्थ उस समय तक स्पष्ट नहीं होता, जब तक किसी विशेषण का प्रयोग न किया जाए। समाज शब्द का अर्थ हम किसी भी समूह से कर

सकते हैं। परन्तु जब हम भारतीय समाज, राजनीतिक समाज, मुस्लिम समाज, मानव समाज इत्यादि शब्दों का प्रयोग करते हैं तो समाज शब्द का अर्थ स्पष्ट हो जाता है कि समाज इन विशिष्ट व्यक्तियों का समूह है।

समाज सामाजिक संबंधों का समूह होता है। मानव जीवन की अभिव्यक्ति उसके सामाजिक गठन द्वारा होती है। मनुष्य अपनी जीवन के लिए समाज पर निर्भर होता है। समाज में रहकर ही वह अपनी इच्छाओं, कार्यों और उद्देश्यों को पूरा करता है। उसका जन्म और मृत्यु भी समाज में ही होती है और जन्म से मृत्यु तक उसके सारे कार्य समाज में रहकर ही संभव होते हैं। इसलिए मनुष्य को सामाजिक प्राणी कहां गया है क्योंकि मनुष्य समाज का अभिन्न अंग होता है। समाज मनुष्य को सही अर्थ में मनुष्य बनता है उसे समाज से अलग करके नहीं देखा जा सकता। वह दोनों एक दूसरे पर आश्रित होते हैं। इसमें कोई भी संदेह नहीं है कि व्यक्तियों से ही समाज बनता है और समाज में रहकर ही व्यक्ति का विकास होता है इस संदर्भ में डॉक्टर उर्मिला गंभीर रहती है कि, "मनुष्य समाज में विद्यामान रहता है। उसका हित, कल्याण एवं उन्नति समाज पर ही निर्भर रहती है। यह समाज की सुख-दुखमयी कथा, विजय एवं पराजय की ऊपकथाओं, निर्माण एवं विनाश एवं विडंबनाओ का एक वास्तविक एवं विस्तृत विवरण आलेख है।"[3]

व्यावहारिक रूप से 'समाज' शब्द का प्रयोग मानव समूह के लिए किया जाता है लेकिन इससे समाज शब्द का वास्तविक अर्थ स्पष्ट नहीं हो पता है। समाज सामाजिक संबंधों का समूह है। सामाजिक संबंध धर्म, सामान्य नैतिक मूल्य, विचारधारा शिक्षा के आधार पर स्थापित होते हैं। मानव को समाज में अपनी पहचान बनाए रखने के लिए अपने संपर्क में आने

वाले व्यक्तियों से संबंध स्थापित करने पड़ते हैं और इन्हीं सामाजिक संबंधों का नाम समाज है।

समाज के लिए एक से अधिक व्यक्तियों का साथ रहना अनिवार्य है। यह सच है कि एक व्यक्ति से समाज नहीं बन सकता। समाज के लिए मनुष्य में पारस्परिक संबंध होना आवश्यक है। लेकिन एक से अधिक व्यक्तियों का साथ होना ही पर्याप्त नहीं होता। पारिवारिक संबंध एक ऐसा तत्व है जिसके बिना सामाज की कल्पना ही नहीं की जा सकती। मनुष्य के संबंध पारिवारिक, राजनीतिक, आर्थिक, व्यक्तिगत तथा मैत्रीपूर्ण आदि बहुत प्रकार के हो सकते हैं। इन्ही विविध संबंधों द्वारा समाज का निर्माण होता है।

समाज मनुष्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि समाज ही मनुष्य का रक्षक है। मनुष्य आवश्यकताओं का पुंज है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अन्य व्यक्तियों से संबंध स्थापित करके उसका सहयोग प्राप्त करके आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है।

समाज मनुष्य के लिए स्वाभाविक है क्योंकि वह मनुष्य की मानसिक भूख को शांत करता है।

3.2.2 समाज की परिभाषा:

मानक हिन्दी कोश में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने- ‘‘बहुत से लोगों का एक स्थान पर रहने वाले समूह को 'समाज' कहा है जिसे विशिष्ट उद्देश्य से स्थापित हुई सभा, किसी सम्प्रदाय के लोगों के समूह आदि के रूप में बताया गया है।‘‘[4]

नालंदा विशाल शब्द सागर में 'समाज' शब्द का अर्थ समूह, गिरोह, सभा आदि रूपों में व्यक्त हुआ है। उपनिषदों में कहा गया है कि एकाकी पुरुष रमण करने वाला नहीं होता, इसी कारण उसने दूसरों की इच्छा की। आधुनिक युग का मनोविज्ञान भी इसी तथ्य को सिद्ध करता

है कि समूह में रहने की इच्छा एक मूल प्रवृति है जो प्रत्येक व्यक्ति में पाई जाती है। समाज के संगठन की सब से छोटी इकाई परिवार है।"[5]

मानक हिन्दी कोशकार के अनुसार, "किसी प्रदेश या भूखण्ड में रहने वाले लोग, जिसमें सांस्कृतिक एकता होती है समाज कहलाता है।"[6]

गिन्सबर्ग के अनुसार, "ऐसे व्यक्तियों के समवाय को समाज कहा जाता है जो कि कतिपय सम्बन्धों या व्यवहारों की विधियों द्वारा परस्पर एकी भूत हुए हो। जो व्यक्ति इन सम्बन्धों द्वारा सम्बद्ध नहीं होते या जिनके बर्ताव मिन्न होते हैं, वे इस समाज से पृथक होते हैं।"[7]

महादेवी वर्मा के अनुसार- "समाज ऐसे व्यक्तियों का समूह है, जिन्होंने व्यक्तिगत स्वार्थों की सार्वजनिक रक्षा के लिए, अपने विषम आचरणों में साम्य उत्पन्न करने वाले कुछ सामान्य नियमों से शासित होने का समझौता कर लिया है।"[8]

डॉ. नगेंद्र का मानना है कि "सामान्य रूप से समाज से अभिप्राय सामुदायिक जीवन की ऐसी अनवरत एवं नियामक व्यवस्था से है, जिसका निर्माण व्यक्ति पारस्परिक हित तथा सुरक्षा के निमित्त जाने-अनजाने कर लेते हैं।"[9]

3.3 यथार्थ: अर्थ एवं परिभाषा:

3.3.1 यथार्थ का अर्थ:

यथार्थ शब्द यथा+ अर्थ इन दो शब्दों से मिलकर बना है। इसमें 'यथा' अव्यय है और 'अर्थ' शब्द। जिसका अर्थ है- अर्थ के अनुरूप या अनुसार। अर्थात् जो अर्थ का अतिक्रमण न करे, वह यथार्थ है।"[10] "इस शब्द का संधि विच्छेद करने पर यह यथा अर्थ यथार्थ के अर्थ को ही अभिव्यक्ति प्रदान करता है। अर्थात् जो अर्थ उसको यथावत् प्रस्तुत करना देखना, पहचानना, सप्रेषित करना आदि। हिन्दी के श्रेष्ठ आलोचक डॉ० नगेन्द्र ''यथार्थ को जगत् की प्रतिच्छाया मानते हैं।'' वहीं डॉ० त्रिभुवन सिंह किसी वस्तु को ज्यों का त्यों ग्रहण कर लेना यथार्थ चित्रण मानते हैं।"[11] मानक हिंदी कोष के अनुसार ''जो अपने अर्थ के ठीक अनुरूप हो, उचित हो, वह यथार्थ है।''[12] यथार्थ का उत्पत्तिपरक अर्थ है ''ठीक, वाजिब, उचित, जैसा होना चाहिए वैसा।''[13]

"मानक हिंदी अंग्रेजी कोश' में 'यथार्थ' का अर्थ इस तरह दिया है-"accurate, matter of fact, real'' [14] 'यथार्थ' शब्द के उपर्युक्त अर्थों के आधार पर ऐसा माना जाता है कि यथार्थ याने जैसा है वैसा, वास्तविक अथवा जो यथास्थिति है उसको प्रस्तुत करना याने यथार्थ है।

यथार्थ जीवन की सच्ची अनुभूति है वह सत्य अर्थों में जीवन का अनुभव और जानकारी है। यथार्थ के लिए वास्तविक और सत्य आदि शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। स्वाभाविक रूप से साहित्य में वह सभी यथार्थ है जिसके पीछे किसी साहित्यकार की अपनी अनुभूति होती है। कोई भी साहित्यकार अपने परिवेश से प्रभावित होकर ही साहित्य का सृजन करता है। वह जो कुछ भी देखता है, या सुनता है, जिसका अनुभव या अनुमान करता है,

जिसकी कल्पना करता है, जिसे बुद्धि से जानता है, अथवा जो आभासित करता है, उसे ही अपनी साहित्य में प्रस्तुत करने का प्रयास करता है, और इसे ही यथार्थ कहते हैं। जो कुछ भी अनुभव किया जाता है उसे यथा वस्तु एवं जैसा है वैसा ही प्रस्तुत करना यथार्थ कहलाता है। किसी भी वस्तु को उचित रूप में जानना या समझना जिस रूप में वह हो या जैसा जिसका स्वरूप हो उसको उसी रूप में ग्रहण करना ही यथार्थ है। अर्थात जो कल्पना मात्र ना हो कल्पना से परे हो वह यथार्थ है। यथार्थ के लिए सत्य शब्द का प्रयोग किया जाता है, यथार्थ को सत्य से अलग करके नहीं देखा जा सकता। यथार्थ कोई पहले से ही स्वयं सिद्ध या पहले से ही निर्धारित की गई धारणा नहीं है। यथार्थ की अवधारणा उतनी प्राचीन है जितना कि स्वयं मनुष्य। इसमें अत्याचार, शोषण, अन्याय के साथ सामाजिक सौंदर्य एवं जीवन के सकारात्मक पक्ष का भी अभिव्यक्ति की है।

मनुष्य अपने जीवन में जिन सच्चाईयों और वास्तविकताओं का अनुभव करता है और जिन सत्यों का प्रयोग करता है वही उसका वास्तव में यथार्थ स्वरूप कहलाता है। यथार्थ हमेशा बहुआयामी होता है। वह कभी एक पक्षीय नहीं होता। यथार्थ एक नए क्रांतिकारी समाज का निर्माण करता है यर्थाथ के द्वारा ही नए समाज और नए मानव का रूप उत्पन्न किया जा सकता है। समाज में व्याप्त समस्याओं का वास्तविक चित्रण प्रस्तुत किया जा सकता है। पाश्चात्य विद्वान जार्ज ल्यूकाच ने ‘‘यथार्थ के संबंध में कहा है कि 'सच्चे यथार्थवादी साहित्य की यह प्रमुख विशेषता है कि लेखक बिना किसी भय या पक्षपात के तथा जो कुछ है वह अपने आस-पास देखकर उसका चित्रण करे।"[15] साहित्य और यथार्थ का गहरा संबंध होता है। यथार्थ को लेकर लिखा जाने वाला साहित्य समाज का कल्याण एवं विकास चाहता है।

यथार्य हमेशा हमारे आस पास घटित होता है। हमारे जीवन के सभी अनुभवों और वास्तविकताओं का मिश्रण ही यथार्थ है।

3.2.2 यथार्थ की परिभाषा:

'यथार्थ' की परिभाषा विभिन्न विद्वानों द्वारा विविध रूपों में प्रस्तुत की गई है।

डॉ. त्रिभुवन सिंह के अनुसार "जीवन की सच्ची अनुभूति यथार्थ है।"[16]

मुंशी प्रेमचंद ने साहित्य मे 'यथार्थ' को श्रेष्ठ मानते हुए कहा है-"साहित्य उसी रचना को कहेंगे, जिसमें कोई सच्चाई प्रकट की गई हो.... साहित्य में यह गुण पूर्ण रूप से उसी अवस्था में उत्पन्न होता है, जब उसमें जीवन की सच्चाइयाँ और अनुभूतियाँ व्यक्त की गई हों।"[17]

यथार्थ के बारे में भगवतीचरण वर्मा कहते हैं-"यथार्थ वह सब है जो इस विश्व में स्वाभाविक रूप से घटित होता रहता है, जहाँ बुद्धि का अनुशासन नहीं है। यथार्थ मूल रूप में मानव के अस्तित्व का सत्य है।"[18]

जयशंकर प्रसाद ने यथार्थवाद की परिभाषा इस प्रकार दी है-"यथार्थवाद की विशेषताओं में प्रधान है लघुता की और साहित्यिक दृष्टिपात। उसमें स्वभावतः दुःख की प्रधानता और वेदना की अनुभूति आवश्यक है। लघुता से मेरा तात्पर्य है साहित्य के माने हुआ सिद्धांत के अनुसार महत्ता के काल्पनिक चित्रण से अतिरिक्त व्यक्तिगत जीवन के दुःख और अभावों का वास्तविक उल्लेख।"[19]

यथार्थवाद के बारे डॉ. नगेन्द्र कहते हैं "यथार्थवाद से तात्पर्य उस दृष्टिकोण से है, जिसमें कलाकार अपने व्यक्तित्व को यथासम्भव तटस्थ रखते हुए वस्तु को जैसी वह है, वैसी ही

देखता है और चित्रित करता है अर्थात् यथार्थवाद वह विचारधारा है, जिसमें कलाकार या साहित्यकार विवेच्य वस्तु का उसी रूप में वर्णन करता है, जैसी वह उसे देखता है।"[20]

"आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का कहना है, 'कविता यथार्थवाद की अपेक्षा कर सकती है, संगीत यथार्थ को छोड़कर भी जी सकता है पर उपन्यास और कहानी के लिए यथार्थ प्राण है।“[21]

अज्ञेय यथार्थ की चर्चा करते हुए कहते हैं, "यथार्थ वास्तव में अमूर्त प्रक्रिया ही है, मूर्त जो कुछ है, वह केवल उस पर खड़ा किया गया एक ढांचा है।"[22]

कमलेश्वर का मत है, "यथार्थ इतिहास जन्य परिस्थितियों की देन है। उसमें आकस्मिकता या घटनात्मकता का आंशिक योगदान हो सकता है। पर वह अनिवार्य रूप से अप्रत्याशित की देन नहीं है। परिस्थितियों के द्वंद से जो सच्चाई पैदा होती है, वही यथार्थ है।" लेखक जब लिखने बैठता है, वह अपनी धारणा को कथा के पात्रों के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान करता है। कथा के पात्रों की रचना की प्रेरणा लेखक को यथार्थ जीवन के आधार पर प्राप्त होती है।"[23]

3.3.3 यथार्थ और यथार्थवाद:

यथार्थ और यथार्थवाद के बारे में देख तो यथार्थ और यथार्थवाद में कोई सैद्धांतिक भेद नहीं है। संबंध की दृष्टि से देखा जाए तो यथार्थ और यथार्थवाद एक दूसरे के पूरक है। यथार्थवाद का प्राण ही यथार्थ है। जीवन का सच्चा अनुभव अगर यथार्थ है तो इसका कलात्मक ढंग में अभिव्यक्तिकरण यथार्थवाद है। यथार्थ और यथार्थवाद के बारे में डॉ. त्रिभुवन सिंह कहते हैं- "यथार्थ और यथार्थवाद के बीच एक निश्चित भेदक रेखा का खींचना अत्यन्त कठिन है।

यथार्थवाद, यथार्थ के आवरण के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। ...जो साहित्यकार मानव-जीवन एवं समाज का सम्पूर्ण वास्तविक चित्र उपस्थित करता है और अपने साहित्य का वस्तुविषय काल्पनिक संसार से न लेकर वास्तविक संसार से लेता है, उसे ही हम यथार्थवादी लेखक कह सकते हैं।"[24]

यथार्थ और यथार्थवाद मूलतः दोनों ही एक दूसरे के निकट होते है, लेकिन फिर भी दोनों की अपनी अलग पहचान है। यथार्थवाद यथार्थ के आधार भूमि पर जीवन की नवीन चित्र है। यथार्थवाद हृदय की वस्तु है और यथार्थ उसका मूल स्रोत, जो अपना विषय वस्तु जीवन की यथार्थता से ग्रहण करता है।

दरअसल देखा जाए तो यथार्थ एक व्यापक तथ्य है, जिसमें मानव समाज के सभी तत्व विद्यमान है। यथार्थवाद साहित्य के महत्वपूर्ण विचारधारा है।

3.4 सामाजिक यथार्थ का अर्थ एवं परिभाषा:

3.4.1 सामाजिक यथार्थ का अर्थ:

सामाजिक यथार्थ समाज और यथार्थ इन दो शब्दों से के सहयोग से मिलकर बना है। समाज से संबंधित किसी भी घटनाक्रम का ज्यो का त्यों चित्रण ही सामाजिक यथार्थ कहलाता है। इसके अतिरिक्त सामाजिक यथार्थ से तात्पर्य आम प्रचलित शब्दों में मनुष्य द्वारा की गई सामान्य क्रियाओं के सच्चे चित्रण से लिया जाता है। ज्ञान-शब्दकोश में सामाजिक शब्द का अर्थ- "समाज-सम्बन्धी, 'समाज में पाये जाने वाला' आदि से लिया गया है।“ इसी शब्द कोश में यथार्थ का अर्थ- "सत्य प्रकट, उचित आदि दिया गया है।"[25] इन दोनों के अर्थो को मिलाकर

सामाजिक यथार्थ से तात्पर्य समाज में घटित होने वाली सच्ची घटनाओं का यथार्थ चित्रण ही सामाजिक यथार्थ कहलाता है।

सामाजिक यथार्थ का सामान्य अर्थ है- वास्तविक अवस्था का यथार्थ चित्रण। साहित्य समाज का प्रतिबिंब होता है। समाज में जो घटनाएं घटित होती हैं उनसे साहित्यकार उसे स्वयं को अछूता नहीं रख सकता, उसका प्रभाव उसके साहित्य पर प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से अवश्य पड़ता है क्योंकि साहित्यकार एक संवेदनशील प्राणी है। सामाजिक प्राणी होने के नाते वह अपने सामाजिक परिवेश से प्रभावित होता है। वह जन्म से लेकर मृत्यु तक समाज से ही जुड़ा रहता है। अतः स्पष्ट है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास सामाजिक परिवेश में ही होता है। साहित्यकार एक संवेदनशील प्राणी होने के कारण समाज के प्रत्येक क्षण को गहराई से भोगकर उसका वही यथार्थ रूप साहित्य में चित्रित कर देता है। साहित्यकार समाज में रहकर सामाजिक तथ्यों का अनुभव करता है। यथार्थ एक चिंतन बिंदु व साहित्यिक आयाम है।

सामाजिक यथार्थ जीवन के समस्त पक्षों जैसे वैयक्तिक, सामाजिक व राष्ट्रीय अथवा राजनैतिक जीवन से सम्बन्धित है अर्थात् मनुष्य के सर्वांगीण जीवन के चित्रण को ही सामाजिक यथार्थ कहा जा सकता है। सामाजिक यथार्थ के भीतर वे शक्तियां आती हैं जो मस्तिष्क के बाहर है। आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परिस्थितियों का समुच्चय ही सामाजिक यथार्थ है। यह शक्तियां मिलकर उस सामाजिक वातावरण का निर्माण करती है जिनमें हमारे संस्कारों की सर्जना होती है। सामाजिक यथार्थ में लेखक प्रस्तुत यथार्थ को ज्यों का त्यों चित्रित कर देता है। सामाजिक यथार्थ देशकाल सापेक्ष होता है। इसलिए इसमें रूप अरूप दोनों का चित्रण अवश्य ही होता है।

सामाजिक यथार्थ में व्यक्ति और समाज एक सिक्के के दो पहलू हैं। एक के बिना दूसरा अधूरा है। समाज केवल व्यक्तियों के समूह भर का नाम नहीं है बल्कि व्यक्तियों के आपसी सम्बन्धों का नाम समाज है। आपसी सम्बन्ध समाज की एक कड़ी है, जिसमें गति व परिवर्तनशीलता रहती है। उसके इन विभिन्न सम्बन्ध सूत्रों का संगठित रूप समाज के अन्तर्गत होता है। एक साहित्यकार के लिए केवल इनकी समझ मात्र ही पर्याप्त नहीं होती अपितु ये सम्बन्ध कैसे और कहां तक उचित व अनुचित है इन सबके बारे में सोचना, मनन करना और समझकर उसके विरोध और पक्ष दोनों के पक्षों को उजागर करना एक जागरूक व यथार्थवादी साहित्यकार का दायित्व है।

जहां मानव में कुछ बुराईयां होती है वहां अच्छाइयां भी अवश्य होती है और जहां अच्छाइयां होती है वहा बुराइयां भी अवश्य ही होंगी। समाज में एक और जहां अच्छाई को बढावा दिया जाता है वहीं दूसरी ओर बुराईयों को दूर करने के प्रयास भी अवश्य किये जाते हैं। साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब होने के कारण समाज में घटित होने वाली घटनाओं का यथावत चित्रण साहित्य में होता है। सामाजिक यथार्थ की परिभाषा देने का प्रयत्न अनेक विद्वानों, लेखकों, समीक्षकों इत्यादि ने किया है और उन सभी का मूल अर्थ यही है जो उचित तथा जैसा हो उसका वैसा ही वर्णन सामाजिक यथार्थ कहलाता है। सामाजिक यथार्थ व्यक्ति के खिलाफ जहां एक ओर यथास्थिति और व्यवस्था की साजिशों को स्वतंत्र्य में लाता है वहां दूसरी ओर मानव के सामाजिक सम्बन्धों के खोखले होते जाने की संवेदना को ग्रहण करता है। ये खोखले सम्बन्ध मनुष्य को भीड में अकेला छोड़ देते हैं।

3.4.2 सामाजिक यथार्थ की परिभाषा:

सामाजिक यथार्थ की संकल्पना को विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से व्यक्त किया है। जैसे:-

शिवकुमार मिश्र के अनुसार:- "सच्चा यथार्थवादी रचनाकार युग जीवन का मात्र दर्शक नही होता और न ही वह उससे तटस्थ रहता है। एक दृष्टि सम्पन्न, सजग तथा सप्राण व्यक्ति होने के नाते, यथार्थ जीवन के साथ उसका सक्रिय इनवाल्वमेंट होता है और जीवन से जुड़ी रहने वाली यह स्थिति ही उसे यथार्थ जीवन का अंकन करने के लिए कुरेदती है। वह अपने विश्वासों, अपनी मान्यताओं और अपने विचारों को लेकर कृति में उतारता है।"[26]

डॉ. त्रिभुवनसिंह सामाजिक यथार्थवाद के बारे में ठीक ही लिखते हैं- "सामाजिक यथार्थवाद का अर्थ है समाज की वास्तविक अवस्था का यथार्थ चित्रण... सामाजिक विषमताओं, भ्रष्टाचारों तथा वैयक्तिक स्वार्थों से आक्रांत, पीड़ित समाज की दयनीय परिस्थितियों को उसके वास्तविक रूप में समाज के सामने प्रस्तुत करना सामाजिक यथार्थवाद का प्रधान काम है।"[27] इस कथन से स्पष्ट होता है कि सामाजिक यथार्थवाद समाज की दयनीय परिस्थितियों को वास्तविक रूप में चित्रित करता है।

प्रसिद्ध समीक्षक डॉ. मैनेजर पांडे सामाजिक यथार्थ के बारे में लिखते हैं- "किसी रचनाकार की चिन्ता का मुख्य विषय जीवन का यथार्थ है, और जीवन का यह यथार्थ बहुआयामी होता है। रचनाकार सामाजिक यथार्थ और सामाजिक संबंधों की समग्रता का चित्रण करते समय मानव संबंध के वैयक्ति, सामाजिक और मानवीय पक्षों का उद्घाटन करता है। वह मनुष्य की वैयक्तिक, सामाजिक और मानवीय संवेदनशीलता की व्यंजना करता है।"[28]

'हिंदी साहित्य कोश' के अनुसार "सामाजिक यथार्थ दार्शनिक दृष्टि से प्रत्यक्ष जगत् से बिल्कुल भिन्न है। प्रत्यय मानव मानव मस्तिष्क से संबंधित है किन्तु सामाजिक यथार्थ के भीतर वे शक्तियाँ आती हैं, जो मानव मस्तिष्क के बाहर है। आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परिस्थितियों का समुच्चय ही सामाजिक यथार्थ है।"[29]

3.4.3 हिंदी साहित्य में सामाजिक यथार्थ:

प्रगतिशील लेखक संग का प्रथम सम्मेलन 1935 ई एम फोर्टर की अध्यक्षता में पेरिस में हुआ। भारत में 1936 में प्रेमचंद की अध्यक्षता में लखनऊ में हुआ। प्रेमचंद की अध्यक्षता में 1936 में लखनऊ में हुए समारोह ने हिंदी उपन्यास के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

प्रेमचंद, राहुल संस्कृतायन, यशपाल, रांगेय राघव, नागार्जुन, अमृत राय आदि ने इस विचारधारा को आगे बढ़ाने में मुख्य भूमिका निभाई और धीरे-धीरे सामाजिक यथार्थवाद का रूप निखरा जिसमें हिंदी साहित्य में एक मजबूत प्रवृत्ति उत्पन्न हुई। हिंदी उपन्यास लेखन ने विभिन्न सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करते हुए समाज की सच्चाई और वास्तविकता को ज्यादा महत्व दिया। इसका मतलब यह नहीं है कि मार्क्सवाद आने से पहले समाज का यथार्थ चित्रण ही नहीं होता था। काल विभाजन की दृष्टि से प्रेमचंद पूर्व युग प्रेमचंद युग व प्रेमचंदोत्तर युग इन कालों में विभाजन किया गया है और इन तीनों ही काल में सामाजिक यथार्थ कम या अधिक मात्रा में चित्रित किया गया है।

प्रेमचंद के पूर्व हिंदी उपन्यास का मुख्य रूप से सुधारवादी और उपदेश वादी दृष्टिकोण से प्रेरित थे और कल्पना को आधार बनाकर उपन्यास लिखे गए और उनका मुख्य उद्देश्य

मनोरंजन ही था। बाबू देवकीनंदन खत्री की प्रसिद्ध उनके तिलस्मी और ऐयारी उपन्यास के लिए अधिक थी। उन्होंने चंद्रकांता नामक उपन्यास लिखा इसका मुख्य विषय जादू टोना, चमत्कार आदि था।

लज्जाराम मेहता ने उसे समय सुधारवादी ढंग पर कई महत्वपूर्ण उपन्यास लिखें जैसे धूर्त रसिकलाल, आदर्श हिंदू आदि। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में दुर्व्यसनों पर सामाजिक उपदेश दिया। ठेठ हिंदी का ठाठ अयोध्या सिंह उपाध्याय द्वारा लिखा गया एक महत्वपूर्ण उपन्यास है, जिसमें उन्होंने हिंदू समाज की कुरीतियों पर बात की है।

प्रेमचंद पूर्व युग में सामाजिक यथार्थ केवल छुट- पूट मात्रा में दिखाई पड़ता है। उसकी वास्तविक शुरुआत प्रेमचंद युग में हुई है। प्रेमचंद ने अपनी साहित्य में समाज का यथार्थ चित्रण किया है।

रामचन्द्र शुक्ल ने इन्दुमती' को हिन्दी की पहली कहानी माना है। इस युग की अन्य कहानियों में वृन्दावन लाल वर्मा ने 1909 में राखीबन्द भाई' लिखकर ऐतिहासिक कहानियों की परम्परा को जन्म दिया। राधिका रमण प्रसाद सिंह की 'कानों में कंगना' व जयशंकर प्रसाद की 'छाया' नामक भावनात्मक कहानियाँ 'इन्दु' पत्रिका में प्रकाशित हुई। आरम्भ के कुछ ही वर्षों में कहानी पूरी तरह परिपक्व दिखती है। इसका महत्वपूर्ण साक्ष्य चन्द्रधर शर्मा गुलेरी 'उसने कहा था (1915) कहानी है। 'उसने कहा था के प्रकाशन के आस-पास ही प्रेमचन्द की कहानियाँ 'सौत' (1915) 'पंचपरमेश्वर' (1916), सज्जनता का दंड' (1916), 'ईश्वरीय न्याय (1917) और दुर्गा का मन्दिर (1917) इत्यादि 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित होने लगी थी।"[30]

हिन्दी कहानी की वास्तविक शुरूआत प्रेमचन्द की ही कहानियों से हुई। क्योंकि सर्वप्रथम इनकी कहानियों के द्वारा ही सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रण हुआ। प्रेमचन्द ने अपनी कहानियों के द्वारा यह सिद्ध किया कि कहानियाँ सिर्फ़ मनोरंजन के लिए नहीं होती। अपितु सत्य को स्वाभाविक रूप से व्यक्त करना भी इनका उद्देश्य होता है। नवाब राय के नाम से उर्दू में कहानी लिखने वाले प्रेमचन्द ने हिन्दी में पहली कहानी 'पंचपरमेश्वर' (1916) लिखी। प्रेमचन्द के बहुसंख्यक कहानियों में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की प्रवृत्ति है। क्योंकि यथार्थ को स्वीकार करते हुए भी प्रेमचन्द ने अपनी प्रायः अधिकांश कहानियों का अंत किसी न किसी आदर्श के साथ ही किया है।

कहानी-यात्रा के उत्कर्ष काल में प्रेमचन्द ने यथार्थोन्मुख आदर्शवाद का परिचय दिया। प्रेमचन्द ने इसे महत्व दिया और 'बूढ़ी काकी', 'अलग्योझा' तथा 'सदगति' जैसी कहानियों में उन्होंने यथार्थोन्मुख आदर्शवाद को ही स्वीकार किया। 'पूस की रात' तक आते-आते प्रेमचन्द यथार्थवादी कहानीकार के रूप में प्रकट हुए और अपनी अन्तिम कहानी 'कफ़न' (1936) में पूर्णतः यथार्थवादी हो गये। सच तो यह है कि 'कफन' भले ही प्रेमचन्द की अन्तिम कहानी है किन्तु इसी से हिन्दी कहानी की एक नयी परम्परा की शुरूआत भी होती है। कहानी के पारंपरिक स्वरूप में भी होती है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रेमचन्द युग से पूर्व के कथा-साहित्य की प्रवृत्ति मनोरंजन के साथ-साथ सुधारवादी उपदेश देना था। इनका जीवन सत्य से कोई लगाव नहीं था। प्रेमचन्द युग भी कथाओं की प्रवृत्ति कोरा मनोरंजन की दुनिया से निकालकर मानव जीवन तथा उसके परिवेश को यथार्थ रूप में वर्णित कर जीवन्तता प्रदान करते हुए समस्त भारतीय वातावरण को प्रकट करने वाला हो गया।

आज के कथा-साहित्य में और उसकी प्रवृत्ति में मूलभूत बदलाव आया है। यह मानव जीवन तथा उसके परिवेश को वैज्ञानिक दृष्टिकोण की कसौटी पर कसी हुई प्रमाणिक अनुभूतियों को संवेदनशील यथार्थ व्यंजना के रूप में अभिव्यक्त करने वाली है। कथाकार सामाजिक सम्बन्धों तथा बदलते जीवन-मूल्योंको तटस्थ होकर इस रूप में कथा साहित्य को चित्रांकित करता है। जिसे पढ़कर पाठक को सामाजिक यथार्थ का बोध होने लगता है। नये कथा-साहित्य की प्रवृत्ति में आया यह बदलाव हिन्दी कथा जगत की बहुत बड़ी उपलब्धि है। सामाजिक यथार्थ का चित्रण करने वाले विष्णु प्रभाकर के कहानी-साहित्य में भी कहानी साहित्य की नयी प्रवृत्ति का स्पष्ट दर्शन होता है।

अंततः सामाजिक यथार्थ आधुनिक युग के विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक परिवर्तनों की धारा को प्रतिनिधित्व करता है। आधुनिक काल में सामाजिक यथार्थ के अध्ययन में विशेष ध्यान दिया जाता है क्योंकि इस समय की सामाजिक परिवर्तन तेजी से हो रही है। इसमें तत्कालीन बदलाव, शिक्षा और सांस्कृतिक बदलाव, सामाजिक न्याय और लोगों के अधिकारों में वृद्धि का अध्ययन शामिल हैं।

3.5 निष्कर्ष:

मनुष्य समाज में अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए समाज से संघर्ष करता रहता है। यही सामाजिक यथार्थ है। सामाजिक यथार्थ के साहित्यकार इन्हीं संघर्षो का समाज के सामने प्रस्तुत करता है। साहित्यकार द्वारा किया गया सामाजिक यथार्थ का चित्रण तत्कालीन परिस्थितियों के निरिक्षण के साथ सामाजिक, आर्थिक, नैतिक अवस्थाओं का विवेचन करता हुआ मानव और समाज के बीच का संबंध तय करता है। सामाजिक यथार्थवाद न केवल

जीवन की कटुताओं, सामाजिक विषमताओं, शोषण, भ्रष्टाचार आदि पर ही प्रकाश नहीं डालता है बल्कि यहां जीवन की सभी समस्याओं रहन-सहन के तौर- तरीको, परंपराओं, जीवन के अच्छे-बुरे प्रसंगों को भी यथार्थ रूप में प्रस्तुत करता है।

सन्दर्भ सूची:

1. अंग्रेजी हिंदी कोष, मीनाक्षी प्रकाशन बेग़म ब्रिज, 1989 पृ. 604
2. श्री नवल जी, नालांद विशाल शब्दसागर, आदीश बुक डिपो, दिल्ली - 110005, 1985 पृ. 407
3. वही
4. रामचंद्र वर्मा, मानक हिंदी कोष, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, प्रथम संस्करण 1965, पृ. 4968
5. श्री नवल जी, नालांद विशाल शब्दसागर, आदीश बुक डिपो, दिल्ली -110005, 1985, पृ. 407
6. रामचंद्र वर्मा (स.), मानक हिंदी कोष, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, प्रथम संस्करण 1965, पृ. 294
7. डॉ. शेखअफरोज फतेमा, नासिरा शर्मा कथा साहित्य: वर्तमान समय के मुद्दे, पृ.27
8. महादेवी वर्मा- श्रृंखला की कड़ीयाँ, राधाकृष्ण प्रकाशन, 1942 पृ.111
9. डॉ नागेंद्र, साहित्य का समाजशास्त्र, Nesanala, 1982 पृ. 6
10. वामन, शिवराम आप्टे, संस्कृत- हिंदी कोष, ज्योतिषी प्रकाशन चौक वाराणसी -221001, 1999 पृ. 827
11. कुमार सुरेंद्र, चित्रा मुदगल के कथा साहित्य में सामाजिक कथा, पृ. 25
12. रामचंद्र वर्मा, मानक हिंदी कोष चौथा खंड, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, प्रथम संस्करण 1965, पृ.435

13. रामचंद्र वर्मा, संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1929 पृ. 840

14. रामचंद्र वर्मा, मानक हिंदी कोष चौथा खंड, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, प्रथम संस्करण 1965, पृ.435

15. विशंभरनाथ उपाध्याय, आधुनिक हिंदी कविता सिद्धांत और समीक्षा, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली मधुरा, 2019, पृ. 442

16. डॉ. त्रिभुवनसिंह, हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद, वाणी प्रकाशन, 2022, पृ. 43

17. प्रेमचंद, साहित्य का उद्देश्य, अनुराग प्रकाशन वाराणसी, 2017 पृ. 10

18. भगवती चरण वर्मा- साहित्य के सिद्धांत तथा रूप, राजकमल प्रकाशन, 2000, पृ. 51

19. जयशंकर प्रसाद, काव्य और कला तथा अन्य निबंध, प्रकाशन तथा वेक्रेता भारती भंडार लीडर प्रेस, इलाहबाद, संस्करण स. '96, पृ. 118

20. डॉ नागेंद्र, विचार और विवेचन, गौतम बुक डिपो, दिल्ली, पृ.97

21. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, आकांक्षा और यथार्थ, युगवाणि प्रकाशन, कानपुर,1965 पृ. 33

22. अज्ञेय, छोड़ा हुआ रास्ता, राजपाल एंड सन्ज, कश्मीरी गेट दिल्ली, पृ. 12

23. कमलेश्वर, नई कहानी की भूमिका, दिल्ली शब्दकार प्रकाशन, पृ. 175

24. डॉ. त्रिभुवन सिंह, हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद, वाणी प्रकाशन, 2022 पृ. 44

25. शंभूनाथ, हिंदी साहित्य ज्ञानकोष,खंड 7, वाणी प्रकाशन, पृ.3989

26. शिवकुमार मिश्र, यथार्थवाद, वाणी प्रकाशन, 2017, पृ. 16

27. डॉ. त्रिभुवन सिंह, हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद, वाणी प्रकाशन, 2022, पृ. 33

28. स. एन. के., महला- वर्ग विचारधारा एवं समाज, रावत पब्लिकेशन, जवाहर नगर, जयपुर, 1994, पृ. 144

29. स. धीरेंद्र वर्मा, हिंदी साहित्य कोष भाग 1, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, 2020, पृ. 914

30. डॉ. नागेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिशिंग कंपनी इंदिरापुर, 2018, पृ. 514

चतुर्थ अध्याय

विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ

विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ

4.1 विष्णु प्रभाकर के कहानियों का कथानक:-

4.1.1 प्रस्तावना:

विष्णु प्रभाकर ने सन् 1934 में कहानी के क्षेत्र में पदार्पण किया और जीवन के अंतिम क्षणों तक इस प्रक्रिया से जुड़े रहें। विभिन्न विधाओं का निर्माण करने वाले विष्णु प्रभाकर ने सबसे अधिक मात्रा में कहानी साहित्य का निर्माण किया है। उन्हीं के शब्दों में "मैंने अनीति का प्रचार करने के लिए कलम नहीं पकड़ा। मैंने मनुष्य के अन्दर छिपी हुई मान्यताओं को उस महिमा को, जिसे सब नहीं देख पाते, नाना रूपों में अंकित करके प्रस्तुत किया है।“[1] मतलब उनकी कहानीयां सीधे जीवन से जुडी हुई है, जिससे वे सीधे मनुष्य के यथार्थ परिवेश को देखते तथा तद्नुसार चित्रित करते हैं।

विष्णु प्रभाकर मूलतः अपने आपको कहानीकार ही अधिक मानते हैं। वे कहते हैं- "में मूलतः कहानीकार हूँ। सभी विधाओं के मूल में कोई न कोई कथात्मक मानसिकता होती है। उपन्यास, रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी और यात्रा विवरणों में भी कथात्मक सूत्र होते हैं। इस तरह में देखता हूँ कि मैं चाहे किसी भी विधा में लिखूं, कहानीकार सर्वत्र सक्रिय है।"[2]

विष्णु प्रभाकर की कहानियाँ मध्यम वर्ग के जीवन के सहज मनोविज्ञान को प्रस्तुत करती हैं। उनकी अधिकांश कहानियाँ स्वाभाविक एवं सहज हैं।

घटना, चरित्र-चित्रण, संवाद और कला की दृष्टि से सभी कहानियाँ विविध रंगों से युक्त हैं। इनकी कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता है कि जीवन के प्रति अंतर्दृष्टि और उसकी अत्यंत सहज प्रस्तुति, जिनमें खोखले आदर्श का प्रदर्शन तनिक भी नजर नहीं आता। अपनी कहानियों

के बारे में वे स्वयं लिखते हैं "में यथार्थ का स्वीकार करता हूँ। समाज सापेक्ष होकर उससे बचा नहीं जा सकता। आदर्शों का बोझ मुझ पर है लेकिन रूढ़ियों की स्थापना या उनमें विश्वास करना आदर्श का पर्याय नहीं है। आदर्श मेरे लिए इतना ही है कि में जो कुछ चाहता हूँ उसको रूप दे सकूँ।"[3]

समकालीन कहानी साहित्य में विष्णु प्रभाकर की कहानियों का अपना अलग-अलग विशिष्ट स्थान है। जीवन की समस्या का वर्णन, मानवजीवन का यथार्थपूर्ण चित्रण, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और शाश्वत मानवीय मूल्यों को उद्धाटित करके कहानी साहित्य की विशेषताएँ बताई हैं।

विष्णु प्रभाकर ने बहुत सारी कहानियां लिखी हैं। परिणाम की दृष्टि से विष्णु प्रभाकर इस युग के कहानीकारों में अग्रणी हैं। विष्णु प्रभाकर के बहुत से कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं, जैसे की पुल टूटने से पहले, खिलौना, मेरा वतन, एक आसमान के नीचे, मेरी प्रेम की कहानियाँ, धरती अब भी घूम रही है, चर्चित कहानियाँ, कर्फ्यू और आदमी, दस प्रतिनिधि कहानियाँ आदि लेकिन इस शोध में विष्णु प्रभाकर संकलित कहानियों में से कुल 18 कहानियों को लेकर उनका अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत संकलन में विष्णु प्रभाकर की सन् 1937 से सन् 1993 तक की 18 कहानियां शामिल की गई हैं। इनमें से चार कहानियां- 'सोना की बात', 'मुरब्बी' 'बंटवारा' और 'हमें गिराने वाले' - चौथे दशक की; पांच कहानियां- 'एक मां एक देश', 'मेरा बेटा', 'तांगे वाला', 'नागफांस' और 'पर्वत से भी ऊंचा' - पांचवें दशक की; चार कहानियां- 'चाची', 'मारिया', 'खंडित पूजा', और 'सांचे और कला'-छठे दशक की, दो कहानियां-एक और दुराचारिणी' और 'एक अधूरा

पत्र'- सातवें दशक की तथा तीन कहानियां-.'अंधेरे आंगन वाला मकान', 'लावा' और 'कर्फ्यू और आदमी'- क्रमशः आठवें, नवें तथा अंतिम दशक की कहानियां हैं। ये कहानियां विष्णु प्रभाकर की कहानियों का प्रतिनिधित्व करती हैं।

विष्णु प्रभाकर के कहानीयों का कथानक यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

4.1.2 बँटवारा:

'बँटवारा' 1938 ई. में प्रकाशित एक उनकी प्रारंभिक कहानी है। संयुक्त परिवार के टूटने के बावजूद संबंधों की मर्यादा सुरक्षित रहने का यथार्थ चित्रण इस कहानी में हुआ है। कृषि प्रधान संस्कृति के बाद संयुक्त परिवार टूटकर एकल परिवार में बदल गए। कारोबार में बँटवारा हो गया, आँगन में दीवारें उठ गई। इस स्थिति का अत्यंत सजीव और यथार्थ चित्रण इस कहानी में हुआ है।

इस कहानी में नंदा नामक एक गृहणी है, जो अपने देवर से बहुत प्रेम करती हैं। जब उसके देवर की शादी हो जाती ह, तब वह अलग रहने लगती है। उनके घर का बंटवारा हो जाता है। तब से नंदा उदास रहने लगती हैं और सोचती है कि वह एक नई दुनिया में आ पहुंची है, जहां सब उसे परिचित होकर भी अपरिचित लगते हैं क्योंकि जिसे उसने अपनी गोद में खिलाया है वह उससे अब अलग हो गया है। लेकिन बाद में वह यह भी सोचती है कि यह सब ठीक ही हुआ है क्योंकि उसका देवर देवेन उसके पति से ज्यादा कमाता था, आगे चलकर इस परिवार विवाद भी हो सकता था, कि सारे परिवार की जिम्मेदारी वही संभालता है इससे घर में महाभारत होता, रहा सहा प्यार भी मिट जाता, इसलिए नंदा उन्हें अलग रहने के लिए कहती है। वह नहीं चाहती थी कि परिवार में दूरियां पैदा हो भाई-भाई में झगड़ा हो।

नंदा का पुत्र गोपाल जब साइंस की परीक्षा उत्तीर्ण कर मेडिकल में भरती कराना चाहता है तो फ़िस के लिए पैसों की समस्या पैदा होती है लेकिन नंदा अपने देवर से पैसे नहीं मांगना चाहती क्योंकि वह ऐसा नहीं चाहती थी कि बाद में पैसों की वजह से उनके रिश्ते में खटास पैदा हो, इसलिए नंदा अपने सारे गहने बेच देती है फिर भी पैसे पूरे नहीं होते हैं। अंत में वह अपने देवर के पास अपनी दूकान गिरवी रखने का प्रस्ताव रखती है तो वह तैयार नहीं होता। अंत में वह तैयार होता है और कागज लेकर रुपये दे देता है और अपने घर आकर उस कागज के टुकड़े करके आग के हवाले कर देता है। ऐसा करके वह अपने भाई-भाभी के स्वाभिमान की रक्षा कर लेता है और अपने दायित्व का निर्वहन भी। कहानी का

अंत नाटकीय होने के बावजूद मानवीय संवेदना की जीवंतता का अहसास कराता है। विष्णु प्रभाकर ने ‘बँटवारा' कहानी में भाई-भाई के अलग हो जाने पर भी उनके बीच संस्कारगत संबंध किस प्रकार बने रहते हैं और वह संवेदना कितनी गहरी होती है, इसका अंकन किया है।

4.1.3 एक मां, एक देश:

एक मां, एक देश यह कहानी द्वितीय महायुद्ध व अकाल से पीड़ित परिवार पर आधारित है। नलिनबाबु और मृणाल का अपना छोटा सा परिवार होता है। युद्ध व अकाल ने मानव की हालात बहुत ही बुरी बना दी थी। घर में मृणाल के दोनों बच्चे भूख के कारण तड़पते बिलखते हैं। मृणाल बच्चों को बहुत समझाती है, लेकिन बच्चे समझने का नाम ही नहीं लेते तो क्रोधित होकर चीख उठती है- "राक्षसों ने जान खा डाली है। मोत भी नहीं आती इन्हें कुए से पेट में सब समा जाता है कभी आग ही नहीं बुझती। मुझे क्यों नहीं खा डालते। ऐसी भी क्या

राक्षसी भुख। अभागे भाग्य भी ऐसा लेकर आए हैं, देश में अन्न का दाना भी नहीं मिल रहा है।“[4]

नलिनबाबू मृणाल को समझाते हैं कि बच्चे नादान हैं। उन्हें इस तरह मत डांटो, क्या पता उनमें से ही कोई महान व्यक्ति बनकर मुसीबत का हल करे। एक दिन ऐसा भी आता है जब भुख के कारण नलिन बच्चों की जिम्मेदारी मृणाल पर छोड़कर चल बसते हैं "कितनी अजीब बात है कि जिस मनुष्य का डंका सारे ब्रह्माण्ड में गुंज जाना चाहिए था, वह धरती पर अकाल व महायुद्धों के विषाक्त दमघोटू वातावरण में भुख और प्यास से मरता जा रहा है। भूखे बच्चे माँ की छाती पर खाल की बनी सुखे स्तनों को निचोड़ते हैं, जिसमें बच्चे माँ-बच्चे की सूरतें मिलकर मानवता का खुला उपहास करते हैं। मानव का गला घोंटते धरती पर मानव के रूप में शैतान दिखने लगते हैं।"[5] नलिनबाबू मरते वक्त मृणाल से कहतेहै कि दोनों बच्चे हमारे नहीं, देश के हैं। उन्हें अच्छी तरह से पालना।

यह युद्ध यह माहमारी एक दिन खत्म हो जायेगी और बंगाल फिर से सोना उगलेगा। मृणाल बच्चे की परवरिश के लिये उनकी भूख मिटाने शहर जाती है। उसने सुन रखा था कि शहरों में भूख मिटाने को कुछ न कुछ मिल ही जाता है लेकिन उसका यह सपना वहाँ जाकर टूट जाता है जब एक सभ्य व्यक्ति खाना देने के नाम पर उसकी इज्जत लूटना चाहता है। मृणाल सोचती है शहर में कोई किसी का नहीं होता। आज का मानव इतना गिर गया है कि वह अपनी भूख मानव के रक्त से मिटाना चाहता है। अंत में वह अपना बच्चा एक भद्र व प्रौढ़ा के हवाले करती हुई कहती है कि, "यह मेरी भूल थी। में उसे पाल सकूंगी। इसे तुम ही पाल सकती हो यह तुम्हारा बच्चा है। देश का बच्चा है।"[6]

मानवता कुछ हद तक भ्रष्ट अवश्य हुई है पर कहीं कहीं इसी मानवता की रोशनी टिमटिमाती प्रतीत होती है। युद्ध और महामारी ने तो मानवता के नाम को मिटाने की कोई कसर बाकी नहीं रखी थी, पर न जाने कितनी अनगिनत माताएँ अपने बेटे को देश के लिए छोड़ गई कि यह बेटा बड़ा होकर दूसरा देशबन्धु या गांधी बनकर माँ और देश की इज्जत करेगा।

4.1.4 मेरा बेटा:

प्रस्तुत कहानी में हिन्दु-मुस्लिम समस्याओं को चित्रित किया गया है। यह कहानी पिता-पुत्र के बीच धर्म की दीवार को स्पष्ट करती है। इस कहानी में हिंदू मुस्लिम के बीच की धार्मिक समस्याएँ दिखाई गई हैं।

एक डॉक्टर अपना फर्ज निभाने का कार्य करता है। सिविल अस्पताल का सर्जन डॉ हसन अभी घर में जाकर चैन की साँस ले ही रहा था, उतनेमें उसे अस्पताल से बुलावा आता है कि दंगे में घायल हुए व्यक्ति का इलाज करना है। साम्प्रदायिक दंगों के कारण जो दहशत डॉक्टर हसन अपने पिता से कहते हैं- "अब्बा हजार साल इस तरह लड़ते रहने पर भी फैसला नहीं हो सकता। असली बात यह है कि वे फैसला करना नहीं चाहते हैं। वे लड़ना चाहते हैं और लड़ते रहेंगे, इसलिए वे एक दूसरे की बात समझने से इन्कार करते हैं।"[7] वैसे देखा जाय तो डॉ. हसन ने ठीक ही कहा क्योंकि अगर इन्सान इन्सान की बात शांति से समझेगा तो इस तरह के दंगे शायद ही हों।

डॉ. हसन एक जख्मी हिन्दू व्यक्ति रामप्रसाद का इलाज कर उसे बचाते हैं। पता नहीं क्यों उसे लगता है कि इस व्यक्ति को कहीं देखा है। जब यह बात अपने पिता को वह बताता

है तो उसके बीमार दादा उस व्यक्ति को देखने के लिए तड़प उठते हैं, क्योंकि वह उनका बेटा होता है। यह एक पिता की पुकार है जो धर्म परिवर्तन कर मुसलमान बन गया था, लेकिन उनका बेटा हिन्दू ही रह गया। दादा अपने हिन्दू बेटे रामप्रसाद को भूल नहीं पाते, लेकिन वह एक मुसलमान बनने के कारण वे रामप्रसाद को स्वीकार नहीं कर पाते क्योंकि उस समय माहौल ही ऐसा था कि हिंदू मुस्लिम के बीच झगडे हो रहे थे और वह एक दूसरे को अपनी आंखों के सामने भी देखना पसंद नहीं करते थे। जब रामप्रसाद जख्मी अवस्था में अस्पताल में आता है तो दादा के सीने में छिपा प्यार उमड़ पड़ता है। इस कहानी के माध्यम से विष्णु प्रभाकर कहते हैं कि धर्म परिवर्तन से रिश्ते में रत्ती भर भी बदलाव नहीं आता। उल्टा रिश्तों में और ज्यादा गहराइयाँ आ जाती हैं।

4.1.5 तांगेवाला:

प्रस्तुत कहानी हिन्दु-मुस्लिम समस्याओं पर आधारित है। तांगेवाला कहानी का नायक अहमद एक नेक इंसान होता है लेकिन वह सांप्रदायिक दंगे में फँस जाता है। उसका बच्चा बुखार से तप रहा है, उसके इलाज के लिए अहमद के पास एक फुटी कौड़ी भी नहीं होती है। वह मजदूरी करके पैसे कमाने घर से तांगा निकालता है। दिन भर टहलने पर भी उसे नाम मात्र के लिए भी एक सवारी नहीं मिलती है। वहाँ पर सवारियाँ तो अनगिनत होती है, लेकिन ज्यादातर लोग हिंदू थे और अहमद एक मुसलान होने के कारण उसके तांगे में बैठने से लोग कतराते हैं, क्योंकि शहर में हवा ही कुछ ऐसी चल रही थी की सभी लोग हर व्यक्ति को शक की नजर से ही देख रहे हैं। उस हादसे ने अहमद को अन्दर तक झिंझोर कर रख दिया। उसका मन कड़वा हो गया। एक तो बच्चे की बीमारी उपर से उसे कर्फ्यू लगने का डर। किसी तरह

शाम को वह घर आता है पर पत्नी के ताने सून उल्टे पाँव हाकिम के पास पैसोकी मदत के लिए लौट पड़ता है। हकीम की हाँ हजुरी करके दस आने देकर चार गोलियाँ लेकर आता है पर बीच में पुलिस कर्फ्यू के कारण उसकी अच्छी खातिरदारी करती है। लाख मिन्नते करने पर पुलिस उसे छोड़ देती है। घर पहुंचने तक उसका बच्चा अल्लाह को प्यारा हो चुका होता है।

1947 के सांप्रदायिक दंगों ने मानवता के साथ खुन की होली खेलकर हर व्यक्ति के सपने को राख में बदलकर रख दिया था। अपने हँसते-खेलते परिवार को अपनी आँखों के सामने लोगों ने दम तोड़ते पाया। मानवता को मानने वाले विष्णु प्रभाकर ने इसी हादसे को तन-मन से झेला और देखा है। यह कहानी इस बात का प्रमाण है। साम्प्रदायिक भावना ने आम जनता को सताने में जो कमी बरती, उसे पुलिसवालों ने पुरा किया।

विष्णु प्रभाकर इस कहानी के माध्यम से यह कहते हैं कि सम्प्रदायिक भावना व रक्तपात को मिटाने पर ही मानवीय मधुर सम्बन्धों का सृजन हो सकता है। दंगे का असर आम जनता व स्त्री पर पड़ा। यह कहानी भी इसी घटना को चित्रित करती है।

4.1.6 नाग-फांस:

'नाग-फांस' यह कहानी एक माँ की कहानी है, जो अपने चार बेटों को खो चुकी है। अब जो दो है उनके खोने का डर भी उसके मन में घर कर चुका है। कुशल उसका बेटा उसकी पढ़ाई पूरी हो चुकीहै इसलिए माँ को उसके विवाह की जल्दबाजी है। वह सोचती है कि विवाह करने से शायद वह अपनी पत्नी के मोह में बंध जाए, पर कुशाल विवाह के दिन ही घर छोड़कर भाग जाता है। पुत्रों के जाने का गम न केवल माँ को है, बल्कि पिता लाला चन्द्रसेन को भी है।

उसके छोटे बेटे सुशील को भाई के तिलक के दिन जो बुखार चढ़ा उत्तरने का नाम ही नही ले रहा था। डॉक्टर और माँ के प्रयत्न और दुआ से अठाइस दिन बाद बुखार उतर गया। वह फिर कॉलेज जाने की जिद करने लगा, पर अचानक रात को ज्वर ने आ दबोचा। तापमान 105 डिग्र था, डाक्टर आश्चर्य चकित रह गए, टाईफाईड के साथ उसे मलेरिया भी हुआ था। इस तरह वह एक के बाद एक बीमारी से घिरता ही चला जा रहा था। जब डॉक्टर को हकीकत का पता चला तो डॉक्टर हैरान ही नहीं बल्कि परेशान भी हो गया। उसे पता चला की खुद माँ अपने बेटे की बीमारी का कारण है। वह अपने बेटे को अपने से अलग नहीं करना चाहती, इसलिए उसे बीमार ही रहने देना चाहती है। लाला चन्द्रसेन डॉक्टर से कहते हैं कि यह माँ की ममता है। उनकी बातें सुन डॉक्टर कहते हैं कि यह ममता नहीं, बेटे की हत्या है।

इस कहानी में स्वार्थी माँ का चित्रण है, जो अपने स्वार्थ के लिए अपने बेटे की बली देना चाहती है। इसमें मनोवैज्ञानिकता और सामाजिक समस्या दोनों है। इस कहानी का उद्देश्य यही है कि अपने स्वार्थ के लिए बच्चों की प्रगति में माँ को कभी बाधा नहीं बनना चाहिए। अपने बच्चों के हित में ही अपना हित समझना चाहिए।

4.1.7 पर्वत से भी ऊंचा:

'पर्वत से भी ऊंचा' कहानी में लेखक कैलाश पर्वत पर जा रहा था, तभी रास्ते में उसकी भेट एक बूढ़े आदमी से हो जाती है। जब लेखक विष्णुप्रयाग की थका देने वाली उतराई और चढ़ाई के बाद घाटी में बसी बल्दोडा चट्टी पर पहुंचा, तभी वह बूढ़ा आदमी भी बद्रीनाथ से लौटता हुआ वहां आकर रुका था। लेखक ने उसे बूढ़े आदमी को पहली बार वहां पर ही देखा था। जब एक दी ने खिलखिलाते हुए कहा "सुना, बाबूजी!"

“क्या?” “यह बाबा कहते हैं, दर्शन तो हो गया अब घर कैसे पहुंचे?”[8]

तब लेखक की दृष्टि उस हसी के पात्र उस बाबा पर गई। उन्होंने देखा कि एक क्षीणकाय वृद्ध है, जिस का पतला मुख क्षीर के समान श्वेत बालों से ढका हुआ है परंतु उनके बीच से झांकते हुए उसके दोनों नयन अमित विश्वास से पूर्ण हैं। उसके पैर लड़खड़ाते हैं। उसने एक मैली धोती ओर कंधे की ओर लगने वाले बटनों का एक कुरता पहना है, जिसके भीतर से निकलता हुआ जनेऊ उसके द्विजत्व का साक्षी है। उसकी कुल संपत्ति में एक लाठी, एक कंबल तथा एक वैसी ही मैली धोती की गणना की जा सकती है।

लेखक उसे देख ही रहा था कि उतने में वह बाबा दुकानदार से कहने लगा भूख लगी है, खाने को दे दो। एक दुकानदार को उस पर दया आई उसने उसे खाने के लिए आटा और चावल दे दिए और कहां रोटी बनाकर खाओ। उस बाबा ने आटे की दो रोटियां बनाई और पास के भट्टी में रोटियों को सेखा और खाने लगा। लेखक उसके गतिविधियों को निहार रहा था। सोच रहा था कि इसका कोई परिवार नहीं है, जो इसे याद कर रहा हो। यह सोचते सोचते उसको अपनी पत्नी और बेटे की याद आने लगी और उसके नयन भर आए। तभी लेखक का ध्यान भंग हो गया। आंखें खोल के देखा तो बाबा उसके सामने बैठे थे।

लेखक ने बाबा से पूछा कहां रहते हो? आपको कहां जाना है तो वह बताने लगा कि हरिद्वार जाना है। लेखक उससे पूछने लगे कि तुम्हारे घर में कौन-कौन है, तो वह अपनी बात को गोल-गोल घुमा कर बताने लगा। लेखक उसकी घर जाने में मदद करना चाहता था, बाबा ने बीडी का अंतिम कश खींचा और लकड़ी उठाई और बोला अच्छा बापूजी चलता हूं। दर्शन

तो हो ही गए। अब मर भी गया तो कोई बात नहीं पहुंच गया तो फिर किसी दिन कैलाश को चल दूंगा।

"और वह चल पड़ा। उसके पैर लड़खड़ा रहे थे। वह उस दुर्गम पर्वत मार्ग पर एक-एक कदम रखता हुआ आगे और आगे बढ़ रहा था। आसपास के सभी व्यक्ति न जाने क्यों हंसना भूल गए थे। उसके उठते ही लेखक भी उठा। दो कदम चला। चाहा पुकारूं, "ओ बाबा! तुम्हें बहुत दूर जाना है, लो एक रुपया तो लेते जाओ। दो-चार दिन की छुट्टी मिलेगी।"[9]

पर तभी लेखक की दृष्टि उसकी दूर होती हुई लड़खड़ाती आकृति पर पड़ी। फिर सामने गगनचुंबी पर्वत श्रृंग को देखा। सहसा लगा, बाबा उस श्रृंग के ऊपर होकर बड़ी शीघ्रता से आगे बढ़ रहा है। लेखक ने आंखें मलीं, पर वह आकृति उसी तरह आगे बढ़ती चली गई। उसकी दृढ़ता ने लेखक की दया-भावना को झकझोर दिया। "उसके सरल पर अमित विश्वास के सामने गर्वोन्मन पर्वत और अभिमानिनी सरिताएं नितांत हेय जान पड़ीं। लेखक को उस क्षण लगा, उसे कुछ देने का विचार करना ही उसे छोटा करने की स्पर्धा करना है। लेखक कहने लगा, "नहीं-नहीं, मैं उसे क्या दे सकता हूं? मुझे तो उलटे उस महान के विश्वास के एक अंश की आवश्यकता है कि जिसके सहारे मैं इन अलंघनीय घंटियों को हंसते-हंसते पार कर जाऊं। अगस्त्य के पास, पांडवों के पास, स्काट के पास, कुक, लिवंगस्टन और कोलम्बस के पास यही विश्वास तो था।"[10]

तब लेखक ने हाथ जोड़कर मन ही मन उस महान को प्रणाम किया और अपने स्थान पर लौट आया।इस कहानी से यह पता चलता है कि मन में अगर विश्वास हो, संकल्प हो, तो दुर्गम से भी दुर्गम मार्ग सुगम हो जाता है और फिर हमें आगे बढ़ने से कोई भी नहीं रोक सकता।

4.1.8 चाची:

चाची लेखक के पड़ोस में रहती थी। पूरे मोहल्ले में उसका दबदबा बना था। चाची अपने परिवार पर ही नहीं, पूरे मोहल्ले पर शासन करती थी। बच्चों के बीमार होने पर झाड़-फूंके, टोना टोटके व भेंट-पूजा तक करती थी। जादू टोना, टोने-टोटके वालों पर उसका अटूट विश्वास था। चाची मोहल्ले वालों को कर्जा भी देती थी। चाची जितनी झगड़ालू थी, उतनी ही नेकदिल औरत भी थी। अगर दिल चाहा तो दुश्मनों पर भी प्यार की बौछार कर देती थी।

लेखकउनके सामनेवाले मकान में रहतेथे तो लेखकको चेतावनी दी गई थी की चाची से बचकर रहना। पर लेखक को इतने सालों में ऐसा अनुभव नहीं हुआ। लेखक बताते हैं कि "अब मैं जा रहा हूं, तो उसे बहुत दुःख हो रहा था। वह मुझे अपनी करूण कहानी सुनाती है। पति के बाद बेटे ने मुझे डुबोया। इतना पैसा था सब लूटा दिया। लेखक ने पूछा- "किसे लूटा दिया। चाची बोली जो भी आता, खुशामद करता उसी को कर्ज देना और वापस न मांगता। मैं पीछे पड़ती तो कह देता अब जाने भी दो गरीब है, कहाँ से देगा। वह मेरी माँ के पास कुछ पैसे जमा करती रहती।"[11]

एक दिन बेटा बहाना बनाकर सभी रूपये ले लेता है। चाची ने जिससे मित्रता की, उसे निभा दिया। जिसे शत्रु मान लिया, उसे मिटा दिया। यह कहानी एक व्यक्ति का चित्र है। वह व्यक्ति हमारी तरह हाड-मांस का ही है। कल्पना कीनहीं।

4.1.9 मारिया:

विष्णु प्रभाकर नारी के प्रति कुछ अधिक ही उदार रहें। उन्होंने नारी को केवल भोग्या नहीं माना, बल्कि उसे सहचारणी के रूप में भी देखा। इस कहानी की नायिका मारिया के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ है। स्थानीय क्लब में नारी को लेकर दोस्तों के बीच बात छिड़ी हुई थी नारी को फैशन की पुतली, यौवन का आकर्षण व पुरुषों की आँखों में धूल झोंकने वाली आदि कहा जाता है। तभी एक महाशय एक कहानी सुनाते हुए कहते हैं कि नारी पुरुष को मुर्ख बनाने में किस तरह बाजी मार लेती है।

हमारे देश के एक प्रसिद्ध लेखक विदेश के दौरे पर गये हुए थे। वहीं पर वे दो महीने ठहरे। इसलिए उनके लिए दुभाषिये की व्यवस्था भी की गई थी। वह दुभाषिया युवती मारीया बहुत स्वतंत्र विचारोंवाली थी। उसके मुक्त व्यवहार को बेचारा भारतीय पुरुष प्रेम समझ बैठता है और उसे रिझाने के लिए नाना तरह के तोहफे भेंट करता है। मारीया लेखक के मन में क्या है, समझ जाती है। लेखक के अपने देश लौटते समय वह उसे बड़ा सा तोहफा भेंट करती है।

लेखक जब घर आकर तोहफा देखते हैं तो हैरान रह जाते हैं। मारिया ने उनके सारे तोहफे वापिस कर दिए थे। साथ में अपने पति व बच्चे के साथ की अपनी तस्वीर भी रख दी थी। अंत में मारिया ने लिखा था मुक्त व्यवहार में वासना की गंध नहीं होती। इस कहानी के माध्यम से लेखक ने भारतीय पुरुष की मानसिकता को दिखाया है। किसी नारी को अपने साथ खुलकर हंसते-मुस्कराते पाते हैं तो उसका अर्थ कुछ और ही निकालते हैं।

इस प्रकार विष्णु प्रभाकर ने नारी के प्रति अपनी संवेदना को मनोवैज्ञानिक रूप में प्रस्तुत किया है।

4.1.10 खंडित पूजा:

विष्णु प्रभाकर के गांधीवाद का प्रभाव हम इस कहानी में देख सकते हैं। इस कहानी के नायक नीलरतन चौधरी हैं, जो केशवाश्रम चलाते हैं। जहाँ पर आस-पास के गाँव के बच्चे आते हैं। वे गांधी जी के सच्चे अनुयायी थे। देश की सेवा करना ही अपना सर्व प्रथम कर्तव्य समझते हैं। नीलरतन चौधरी को आज़ादी की प्रतिज्ञा को दोहराने आई युवती को देखकर झुंझलाहट होती है। उनका मन क्रोध से भर उठता है। वे अपने मित्र से कहते हैं- "आजादी, आजादी है? आजादी का अर्थ समझनेवाले इस प्रकार रहा नहीं करते देखते हो उनकी होंठ की लाली, मानो रक्त लपेट लिया हो।"[12]

वीणा और रजनी को नीलरतन चौधरी का सत्य पर चलना बहुत भाता है। वे हमेशा उनके आश्रम की चर्चा करती है। वीणा पहली बार आश्रम देखने जाती है, उसे वहाँ इतना प्यार व अपनत्व मिलता है कि वह वहीं की होकर रह जाती है। वीणा जब खद्दर की साड़ी पहन देश सेवा की दीक्षा लेती है तब नीलरतन को अपनी गलती का एहसास होता है। वह नारी से जितना दूर भागना चाहता है, नारी के प्रति उसकी आसक्ति उतनी ही बढ़ती जाती है। अंत में वह एक सच्चा देशभक्त बन जाता है। चारों ओर उसके नाम व काम की चर्चा होने लगती है। एक जुलूस में वह पुलिस की गोली का शिकार हो जाता है। वीणा अवरूद्ध कण्ठ व आसक्त मन से नीलम से कहती है- "कुछ भी हो नीलम, तुम्हारी यह पूजा भगवान स्वीकार नहीं करेंगे, यह खंडित पूजा है।“[13]

वीणा के उपर्युक्त शब्द कितने अर्थ लिये हुए हैं। हमारे अभागे देश को आज भी नीलरतन जैसे सच्चे देशभक्त की जरूरत है। अगर वे अपने सपने यानी उनके उद्धार के सपने बीच में ही छोड़ जाएँगे तो वह खंडित पूजा के समान ही होगा।

4.1.11 सांचे और कला:

हरिया की बेटी दुलारी दीवाली के लिए खिलौने बनाती थी। वे जात के कुम्हार थे। उसने यह कला बिरजू से सीखी थी। बिरजू साँचे को तोड़कर समय का उपयोग करके कुछ नयी कला निर्माण करता था। दुलारी कुछ मूर्तियाँ बिरजू के पास रखती थी। दुलारी की शादी तय हो जाने के कारण बिरजू की बनाई राधा-कृष्ण की मूर्ति वह लेखक के पास रखती है और कहती है बस आप ही उसकी सच्चाई को समझते हैं। उसी बहाने कभी कभी आया करूंगी।

वह मूर्ति अभी तक लेखक के पास रखी हुई थी, लेकिन दुलारी के सादी के बाद न तो बिरजू उसे देखने आया न दुलारी। शादी के बाद दुलारी खिलौनें तैयार करके कला के साथ अर्थ प्राप्ति भी कर रही थी। लेखक के पास जो मूर्तियाँ रखी हुई थी उसके पास लेखक ने राधा-कृष्ण की एक असाधारण मूरत रखकर नीचे लिखा था की राधा-कृष्ण साँचे और कला ।

प्रस्तुत कहानी में एक शिल्पकार कुम्हार के परिवार का चित्रण है। इसमें आर्थिक समस्या को स्पष्ट किया गया है। उस राधा कृष्ण की मूर्ति के पीछे का भाव महत्त्वपूर्ण है, जिसे लेखक ही समझते हैं। इसलिए लेखक इस प्रेम भाव का जतन करके रख लेते हैं। ऐसी बहुत सी मूर्तियाँ बनाई जा सकती हैं, लेकिन ये साँचे की मूर्तियां है, परंतु यह मूर्ति साँचे की होकर भी अधिक कलात्मक है। क्योंकि इसके पीछे प्रेम का भाव है। इस कहानी में लेखक ने स्वयं एक प्रेमी के प्रेम का जतन किया है।

4.1.12 एक और दुराचारिणी:

'दुराचारिणी' यह कहानी कि नायिका का नाम श्यामवर्णी शरबती है। दिन-रात मेहनत करने पर भी सास और पति की पिटाई ही उसे नसीब होती है। शरबती मृणाल के घर काम पर आती रहती है। मृणाल का पति नारी मुक्ति का समर्थक होता है। उसे शरबती के प्रति हमदर्दी है।

एक दिन तड़के ही शरबती मृणाल के घर आ टपकती है। पति-पत्नी दोनों शरबती को देखकर आशंकित हो जाते हैं। शरबती आश्वासन पाकर फफक-फफक कर रोती हुई कहती है कि उन्होंने कल बेरहमी से मारा, अब में वहाँ कभी नहीं जाऊंगी। इसी घर में किसी कोने में पड़ी रहूंगी। शरबती के नीले शरीर को देखकर मृणाल क्रंद्रकम्पित होकर पति से कहती है कि ऐसे लोगों को हवालात की हवा खिलानी चाहिए। एक दिन शरबती देर रात से घर आती है तो मृणाल उसकी अच्छी खातिरदारी करती हैं और अपने पति से कहती हैं कि अब यह हमारे घर पर नही रह सकती।

एक दिन शरबती अपने प्रेमी रामप्रसाद के साथ अपने दुःख दर्द बांटती हुई रंगे हाथों पकड़ी जाती है। उसके दर्द, उसकी तड़प की भावना पति के प्रति असीम प्यार को देखकर मृणाल व उसके पति हैरान रह जाते हैं। विष्णु प्रभाकर यही बताना चाहते हैं कि किसी भी वर्ग की स्त्री अपने पति से अलग होकर जीना पसंद नहीं करती। उससे बंधे रहकर ही उसे सुख मिलता है।

4.1.13 एक अधूरा पत्र:

'एक अधूरा पत्र' यह कहानी पत्र शैली में लिखित एक सैनिक के अनुभव, उसके शौर्य एवं मानसिक दशा का अंकन करती है।

इस कहानी में लेखक हमेशा सैनिक अस्पताल में जाकर वहां आए घायल सैनिकों की सेवा करता था। उनको लिखना बहुत पसंद था इसलिए वह सैनिकों के अनुभव को पूछता और उसे लिख डालता था। एक दिन वैसे ही वह अस्पताल आया और एक व्यक्ति को चुना जो बहुत घायल अवस्था में था और जिसकी वीरता की कहानी सबकी चर्चा का विषय बनी हुई थी। लेखक डॉक्टर के कहने पर उसकी सहायता करने लगा डॉक्टर ने उसे ज्यादा बोलने के लिए मना किया हुआ था लेकिन वहां लेखक को अपनी कहानी सुना रहा था। कहानी सुनते सुनते वह उत्तेजित हो उठा इसलिए लेखक को वहां से बहाना करके जाना पड़ा उससे ज्यादा बोलना मना था।

लेखक फिर एक बार लौटकर उसके पास आए तब वह शांत बैठा था। वह लेखक से पूछने लगा कि तुम मेरी पत्नी को एक पत्र लिख सकते हो? क्योंकि मैं बहुत पढ़ा लिखा नहीं हूं। अपनी बात कह सको इतनी भाषा भी मुझे नहीं आती है। लेखक ने उनकी बात सुनी और पत्र लिखने के लिए बैठ गए।

पत्र में सैनिक ने अपनी पत्नी के प्रति प्रेम, उसके पत्नी के साथ बिताए पल और लड़ाई के वक्त आए अनुभव, उसके शौर्य का वर्णन एवं उसकी जो मानसिक दशा है उसका चित्रण किया है। अंत में यह पत्र लिखते लिखते सैनिक के प्राण चले जाते हैं और वह पत्र लेखन के पास ही अधूरा रह जाता है। लेखक चाहता था कि वह पत्र उसकी पत्नी को दे दिया जाए।

लेकिन उनका मन नहीं मानता उन्हें लगता है कि उसने यह पत्र अपनी पत्नी को नहीं लिखवाया। यह पत्र कल देवता के नाम है। इसलिए लेखक ने इसे प्रकाशित करवा दिया।

4.1.14 मुरब्बी:

'मुरब्बी' विष्णु प्रभाकर की प्रारंभिक कहानी है किन्तु अपने कथ्यगत यथार्थ के कारण यह एक विशिष्ट कहानी बन गई है। यह कहानी मानवीय संवेदना के जीवंत रहने का बोध कराती है। मुरब्बी का बेटा जिस शख्स पर नालिश करता है, खुद मुरब्बी अपने बेटे से छिपाकर उसकी आर्थिक मदद भी करता है और उसे नालिश से भी बचाता है। मुरब्बी अविश्वसनीय चरित्र नहीं है। वह भारतीय समाज के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, जिसका मूल्यों में आस्था है और मनुष्यता में विश्वास।

मुरब्बी एक कंजूस व्यापारी है। उसका व्यापार अच्छा चल रहा है। लोगों से उसका मेल-मिलाप भी बहुत अच्छा है। मुरब्बी लोगों को कर्जा भी देता है। उसका अपना अजीज दोस्त मुनवर उसका कर्जदार है लेकिन उसने बहुत दिनों से कर्ज अदा नहीं किया है। मुरब्बी का बेटा शहर नालिश के लिए जाता है। वह अपने पिता से मुनवर की शिकायत करता है की आपके दोस्त ने अभी तक कर्ज अदा नहीं किया है इसलिए उसका नाम भी है। मुरब्बी बाहर से सोम्य दिखता है पर दोस्त को लेकर अन्दर से बहुत बेचैन है। यह मुनवर उसका वही दोस्त है जिसने मुसीबत के वक्त मदद की थी इसलिए किसी तरह वह पैसा इकट्ठा कर अपने बेटे को यह कह कर देता है कि यह पैसे मुनवर ने दिए हैं। मुरब्बी मुनवर के प्रति अपनी सच्ची मित्रता को सिद्ध करता है।

4.1.15 हमें गिराने वाले:

'हमें गिराने वाले' कहानी मजदूरों की व्यथा कथा को उजागर करती है। कहानी का बिहारी गरीबी के कारण ग्रस्त है। जब वह अपने मालिक के कमरे की चीजों को देखता है तो वहअपने मालिक के परिवार से अपने परिवार की तुलना करता है। एक दिन वह अपने पत्नी के साथ बाजार चला जाता है तो एक युवक हँसकर उसकी गरीबी का मजाक उड़ाता है। भगवान के दर्शन कराने मंदिर चला जाता है तो मंदिर का आदमी उसे रोकता है। एक पैसा दक्षिणा डाल देता है तो एक पैरों में भगवान के दर्शन नहीं होते कहकर उसे भगा दिया जाता है। यह उसे सहा नहीं जाता। रास्ते में एक मोटार से टकरा जाता है तो वह उस नचानेवाले युवक पर सारा गुस्सा उतारता है। गुस्से में आज तक दबी हुई-सी अपनी भावना वह व्यक्त करता है, "हमें नीचे गिरानेवाले हम नहीं है तुम हो तुम जो दया परोपकार, सेवा और न जाने क्या नया नाम लेकर हमें दबातें जा रहें हैं। हमें उठने ही नहीं देते। हमें अपने पैरों पर खड़े ही होने नहीं देते"[14] स्वतंत्रता के बाद मानव के प्रति देखने के दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ। केवल अर्थ केंद्रित सत्ता वृत्ति ने मानव-मानव में भेद निर्माण होते गए। स्वतंत्रता पूर्व मांगल्य का जो सपना देखा था वह बिलकुल चकनाचुर होता गया। इसी कारण स्वार्थ वृत्ति को दबोचकर नष्ट करने की तीव्र इच्छा शक्ति बनती गई। मात्र इसमें जो दीन और लाचार थे वह दबे हुए आक्रोश को केवल व्यक्त करने के सिवा कुछ नहीं कर सके। इसलिए उनकी परिस्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हो पाया।

4.1.16 अंधेरे आंगन वाला मकान:

विष्णु प्रभाकर की इस कहानी में पारिवारिक समस्या का चित्रण मिलता है। बुढ़े माँ-बाप की विवशता और पीड़ा का चित्र उभरता है। बच्चे बड़े होकर विदेश चले जाते हैं। वहीं अपनी गृहस्थी बसा लेते हैं। छोटी बेटी हालांकि अभी अविवाहित है फिर भी वह माँ-बाप के साथ रहने के बजाय, होस्टेल में रहना पसन्द करती है।

'अंधेरे आंगन वाला मकान' नामक कहानी में लेखक ने वृद्ध दंपति का चित्रण किया है। वृद्धावस्था में जब माता-पिता को बच्चों के साहरे की ज्यादा जरूरत होती है उसी समय बच्चे उनकी परवाह न करते हुए अलग रहते हैं। जब बच्चे छोटे होते हैं तब माता-पिता उनकी अच्छी परवरिश करते है, अच्छी शिक्षा देते है और सपने सजाये बैठते हैं कि बड़े होकर वह उनका सहारा बनेंगे लेकिन बच्चे माता-पिता के सपनों को कुचलकर उन्हें छोड़कर बाहर जा बसते है।

दीप्ति अपने पति माधव के साथ मंजुला के बताये हुए पते पर घर आती है, और देखती है की एक बड़ा मकान है, आंगन है लेकिन सुनसाना। दरवाजे पर दस्तक देने पर एक वृद्धा आकर खोलती है। वह मंजुला की माँ है। मंजुला के पिता किसी काम से बाहर गये हैं। वापस आने पर घर में मेहमानों को देख उन्हें बेहद खुशी होती है। बेटे ने माँ-बाप को भरपूर सुख सुविधा तो दे दी है, पर प्यार नहीं दिया है। दोनों बेबस वृद्ध दम्पति को देखकर लगता है कि सुख-सुविधा है लेकिन घर मे खुशियाँ ही नही है तोसुख सुविधा होने का क्या फ़ायदा, मेवे फल और मिठाईयां हैं। लेकिन खाएँ कौन?

रचनाकार के शब्दों में, "वृद्ध दम्पति ऐसे कालखंड के प्रतीक है, जिसमें स्पंदन है पर समूचे कालखंड से जुड़ने की शक्ति नहीं रही, हाउ डु यु डु और बैंक यू का जमाना है। प्यार मुहब्बत का नहीं।"[15] वर्तमान समय में सामाजिक रूप बदलते नजर आते हैं। संयुक्त परिवार टूट रहे हैं। युवा पीढ़ी अपनी आजादी के लिए अपना घर अलग बसाए हुए है। औपचारिकतौर पर अपने माता-पिता से मिलने आ जाते हैं। युवा पीढ़ी तो आराम की जिंदगी काट रहे हैं, पर एकाकीपन के त्रासदी को वृद्ध मां-बाप जेल रहे हैं। माँ-बाप से दूर अपना जीवन बसाये संतान उनके एकाकीपन की पीड़ा को महसूस नहीं करते हैं।

4.1.17 लावा:

'लावा' यह कहानी औरत पर हो रही जुल्म पर आधारित है। पुरुष शराब के नशे में औरतों पर जुल्म करता है, उसे मारता पिता है लेकिन औरत एक आवाज निकाले बिना उसे सहती है और जुर्म करने वाला पति थोड़ी सी भी मन में एक लानी न रखकर सीना चौड़ा करके घूमता है।

संदीप इस कहानी का नायक है। जो पूरी कहानी बताता है। संदीप के पड़ोस में गौरी नाम की एक गोरी बहू रहती थी। दादी की कहानी की तरह जैसा उजाला रूप, वैसा ही उजाला स्वभाव। सदा मुस्कुराती रहती बोलती तो मानो फुल झरते, घर भी वैसा ही उजास से भरा-भरा, गोद में पहलौठी का बेटा था। वह इतनी सुंदर थी कि सारे गली के लोग उसकी सुंदरता के उसके स्वभाव के दीवाने थे, उसमें संदीप भी था। वह एक दिन अपनी पत्नी से पूछता है कि, "गौरी को मैंने कभी ऊंचा बोलते नहीं सुना।"[16] उसकी पत्नी विभा ने जवाब दिया कि मैं भी इसी बात से हैरान हूं, की आए दिन उनके घर कोई ना कोई मेहमान आते रहते हैं और

उसका पति उसे रात दिन घर का मेहमानों का काम करवाता रहता है फिर भी वह अपने मुंह से एक शब्द भी नहीं निकलती।

एक रात गौरी का पति शराब पीकर घर आकर अपनी मनमानी करता है इसलिए गौरी उसे टोकती हैं। जिसके कारण उसका पति उसे आग लगाकर जला देता है। सुबह होते ही यह बात सबको पता चलती है, लेकिन गलत अफवाह फैल जाती है, कि बच्चें के लिए दूध गरम करते वक्त जल गई पर उसकी पड़ोसन विभा को पता होता है, कि उसके पति ने ही उसे जलाया था। विभा की बात का कोई सबूत नहीं था, क्योंकि गौरी ने अपने पति के डर के वजह से और अपने बच्चें को मेरे पीछे कौन देखेगा इस भय के कारण गलत बयान दिया था, कि मैं बच्चे के लिए दूध गरम करते समय जल गई। यह बातें सुनकर उनके मोहल्ले में रह रही मंगल तमतमा कर चीख उठी, ''लानत है ऐसी सीता-सावित्री होने पर, जो जुल्मी को जुल्म करने पर भी साफ छूट जाने दे, हत्यारे को दुनिया के सामने छाती ठोंककर चलने की हिम्मत दे। मेरे साथ ऐसा होता तो मजिस्ट्रेट से साफ कह देती कि यह है हत्यारा। इसने मुझे जलाया। आप इसे भी जिंदा आग में झोंक दें..."[17] उसके जैसे शब्द ज्वालामुखी की तरह भभक उठ रहे थे।

गौरी जैसे औरतों के कारण ही रामेसूर जैसे पुरुष जुल्म करके भी समाज में सीना चौड़ा करके आराम से जी रहे हैं।

4.1.18 कर्फ्यू और आदमी:

सन् 1993 के समय की विभिन्न समस्याओं का वर्णन लेखक ने इस कहानी संग्रह में प्रस्तुत किया है। यह कहानी अयोध्या कांड की घटना से सम्बन्धित है। इस काण्ड ने मानव पर इतने जुल्म किये, सारा संसार इस अमानवीय तबाही से कांप उठा। हालांकि यह समस्या मन्दिर

व मस्जिद को लेकर थी, जिसे हमारे सभ्य नेताओं ने भड़काया था। इस घटना ने सारे भारत को अपनी चपेट में ले लिया, जिससे चारों ओर भयंकर घटनाएं होने लगीं। इसके कारण पूरे भारत में कर्फ्यू लगा दिया गया। कर्फ्युं से ज्यादातर नुकसान आम जनता का ही हुआ। इस बर्बादी को और ज्यादा बढ़ावा दिया हमारे सिपाहियों ने। इन्हीं के कारण आम जनता ने काफी तकलीफें भी सहन की।

इस कहानी का नायक एक साहित्यकार है, जो कर्फ्यू में फंस गया है। सिपाही उन्हें कर्फ्यू के इलाके में जाने पर रोक लगा देते हैं। बड़े अफसर के द्वारा यह बताने पर कि ये बहुत बड़े साहित्यकार हैं, इसलिए उन्हें छोड़ दिया जाता है। साहित्यकार का मन इन वर्दीवालों को देखकर ग्लानि से भर उठता है, जिन्हें जनता की सेवा करनी चाहिए, वे जनता को सता रहे हैं, जिसके हाथ में सत्ता है वही अपनी मनमानी करने में लगे हुए हैं। अयोध्या काण्ड के पीछे सभी बड़े बड़े व्यक्तियों का हाथ था। इस कहानी में नेता, अफसर व सिपाहियों पर व्यंग्य देखने को मिलता है, जो अपनी हुकूमत बनाये रखने के लिए लोगों की लाशों पर गुजरने से भी पीछे नहीं हटते। इनका काम जनता की सेवा करना है पर कुर्सी से चिपके व वर्दी से लिपटे रहनेके कारण ये लोग सेवा का अर्थ क्या जानेंगे? अगर इन्होंने यह अर्थ जान लिया तो ऐसी घटनाएँ हमारे देश के इतिहास में कभी नहीं होगी।

4.1.19 निष्कर्ष:

विष्णु प्रभाकर की कहानियों की कथावस्तु संक्षिप्तता, मौलिकता, रोचकता, नवीनता व उत्सुकता जैसे सभी गुणों से युक्त है। कहानियों के शीर्षक भी स्पष्ट, विषयानुकूल, लघु, आकर्षक एवं नवीनता से युक्त है। उनकी कहानियों की विषयवस्तु स्पष्ट है। सभी कहानियों

का आरम्भ विष्णु प्रभाकर ने वर्णन, वार्तालाप, चरित्र-चित्रण घटना एवं पात्र के माध्यम से किया है।

विष्णु प्रभाकर की सभी कहानियाँ कथोपकथन, भावात्मकता, व्यंग्यात्मकता, मनोवैज्ञानिकता तथा उद्देश्यपूर्णता के साथ-साथ स्वाभाविकता लिए हुए हैं। देशकाल व वातावरण कहानी के अनुकूल ही बन पड़े हैं। कहानियों की शैली रोचक और प्रभावशाली है। उनकी कहानियों का उद्देश्य मनोरंजन, उपदेश, आदर्श, समस्या चित्रण, राजनीति के चित्रण व समाज सुधार ही रहा है।

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि विष्णु प्रभाकर की कहानियों में पारिवारिक जीवन का विस्तृत चित्रण हुआ है। व्यक्ति और परिवार से सम्बन्धित सभी विषय उनकी कहानियों के कथाबीज बन चुके हैं। स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध, मान, मर्यादा और पत्नी सौंदर्य और जवानी का दुरूपयोग, हिन्दु विधवा की करूणापूर्ण अवस्था, नारी विद्रोह की प्रवृत्ति, आज के परिवार में वृद्धों का स्थान, टूटते पनपते रिश्ते एवं धर्म की बाधा, पति-पत्नी के प्रेम का स्वरूप सभी विषयों को विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है।

4.2 विष्णु प्रभाकर की कहानियों मे अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ का विश्लेषण:

4.2.1 प्रस्तावना:

सामाजिक समस्याओं का विचार करने से पहले हमें यह जानना आवश्यक है कि समाज में समस्याओं का जन्म कैसे होता है। समाज में परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन आते रहते हैं। प्राचीन काल सेसमाज में व्यक्तियों के जीवन एवं व्यवहार के आधार पर संस्कृति का विकास नियंत्रण होता आ रहा है। समाज में कालानुसार सामाजिक परिस्थितियों में भी परिवर्तन आना स्वाभाविक है।

मानव जीवन के तौर-तरीके को भी परिवर्तित कर देती है। परिणामस्वरूप मानव मन की इच्छाएँ भी उसके परम्परागत जीवन मूल्यों पर प्रभाव डालते हैं। स्थाई मूल्य और इच्छा परक मूल्य के बीच जब संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है, तब वैयक्तिक एवं सामाजिक समस्याओं का जन्म होने लगता है।

विष्णु प्रभाकर ने पिछले 20 वीं शताब्दी की साहित्यिक, राजनीतिक, सामाजिक घटनाओं तथा उथल-पुथल को अपनी आँखों से देखा है और अनुभव किया है। उस समय देश में रहकर उन समस्याओं में भाग भी लिया है, इस कारण उनका लेखन उनके व्यक्तित्व के साथ-साथ जीवन की घटनाओं से प्रभावित हुआ। उन्होंने इन आँखों देखी समस्याओं को अपने कथा-साहित्य में चित्रित करना ही नहीं अपितु उनके समाधानों को भी प्रस्तुत करने का भी प्रयास किया। अपने कथा-साहित्य के विभिन्न पात्रों एवं घटनाओं के सृजन द्वारा विष्णु प्रभाकर ने विभिन्न प्रकार की सामाजिक समस्याओं की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया।

विष्णु प्रभाकर एक ऐसे रचनाकार हैं, जिनके जीवन और साहित्य में यथार्थ और आदर्श के निश्चित अर्थ होते हुए भी वे मिलेजुले से लगते हैं। उनकी प्रत्येक रचना के मूल में एक से अधिक मानवीय मूल्य और सामाजिक उद्देश्य उजागर होते हैं। उनकी कहानियों में आए सामाजिक यथार्थ को निम्नलिखित उपशीर्षकों के माध्यम से समझा जा सकताहैं–

4.2.2 पारिवारिक समस्या: संयुक्त परिवार के विघटन की समस्या:

विष्णु प्रभाकर ने अपने कथा साहित्य में सुधारावादी दृष्टिकोण को व्यक्त किया है। परिवार मानवीय संबंधों की एक महत्त्वपूर्ण इकाई है। लेकिन जब परिवार की मुख्य व्यक्ति या मुखिया अपनी वैचारिक मनमानी के जरिये आगे बढ़ता है और अपने अधिकारों का दुरूपयोग करने लगता है तभी अनेक समस्याओ का बीज पनपने लगता है। हर पल बदलती हुई मान्यताओं, विचारधाराओं और मशीनी जिंदगी के कारण आज पारिवारिक विघटन की समस्या उठ खड़ी हुई है। गाँव को छोड़कर जानेवाली भोली भाली जनता को यह ज्ञात नहीं है कि आज से टुकड़ों में बिखर जायेंगे। पारिवारिक सूत्र माला के मोतियों के समान होते है माला में से एक भी मोती गिर गया तो सारी माला टूट जाती है।

विष्णु प्रभाकर ने अंधरे आँगन वाला मकान' और ‘बँटवारा’ कहानियों के माध्यम से संयुक्त परिवार के विघटन की समस्या को दिखाया है-

अंधेरे आँगन वाला मकान' नामक कहानी में वृद्ध दम्पति का चित्रण किया है। वृद्धावस्था में जब बच्चे के सहारे की जरूरत ज्यादा होती है उसी समय बच्चे उनकी परवाह न करते हुए अलग रहते हैं। माता-पिता के रूप में बच्चों की परवरिश करते समय उन्हीं वृद्ध माता-पिताने कितने सपने संजोये बेठे होंगे कि बच्चे बड़े होकर उनके बुढ़ापे का सहारा बनेंगे।

उसका नाप नही निकाल सकते लेकिन जब बच्चे बड़े होकर माता-पिता के सपनों को कुचलकर उन्हें छोड़कर बाहर जा बसते हैं और अपने माता-पिता की परवाह न करते हैं उसका यहाँ शब्दसह निरूपण हुआ है जब मंजुला की सहेली दिप्ती घर पर आकर वृद्धों की हालत देखती है तब उनके मुख से यह शब्द बिखरते हैं। दिप्ती ने कहा "जानते हो मुझे क्या लग रहा है? तुम्हे लग रहा है कि जैसे एक दिन उन दोनों के स्थान पर हम भी हो सकते हैं।"[18]

संयुक्त परिवार टूटकर एकल परिवार में बदल गए। कारोबार में बँटवारा हो गया, आँगन में दीवारें उठ गईं। इस स्थिति का अत्यंत सजीव और यथार्थ चित्रण "बँटवारा" इस कहानी में हुआ है। नंदा और उसका परिवार सब पहले एक साथ रहते थे। लेकिन जब उसके देवर की शादी हो जाने के बाद उनका संयुक्त परिवार टूट जाता है। नंदा ही खुद उन्हें अलग रहने के लिए कहती है क्योंकि उसका नंदा के पति से ज्यादा कमाता था। बाद में पैसों के कारण घर में लड़ाई न हो इसलिए नंदा उन्हे अलग रहने के लिए कहती है और उनका संयुक्त परिवार टूट जाता है।

यहां समस्या हम आज भी देख सकते हैं की किस प्रकार से पारिवारिक सदस्यों के बीच की वैचारिक अनमोल के कारण संयुक्त परिवार टूट रहे हैं। आज परिवार के सभी सदस्य एक साथ नहीं रह सकते क्योंकि सभी की अपनी अलग जीवन शैली होती है, सब अपनी मर्जी के मालिक होते हैं।सबके विचार अलग होते हैं, जिसके कारण एक साथ रहने से वाद विवाद हो जाता है, जैसे की बटवारा कहानी में दिखाया गया हैकि पहले नंदा और उसका पूरा परिवार एक साथ रहता था, लेकिन जब उसके देवर की शादी हो जाती है तब उनके जीवन शैली अलग हो जाती है और नंद का देवर उनके घर में ज्यादा कमाता था इसी के कारण उसकी पत्नी को लगता है कि वही सब घर संभालता है जिसके कारण नंदा अपने परिवार को

लेकर अलग रहती हैं। घर का बँटवारा करती है ताकि उनके अच्छे संबंध में पैसों की वजह से खटास पैदा ना हो।

4.2.3 दाम्पत्य जीवन सम्बन्धित समस्या:

परिवार की छोटी सी इकाई कुटुम्ब और प्रेम अर्थात् दाम्पत्य प्रेम। पति-पत्नी यह पूरे नींव के पत्थर के समान गिने जाते हैं। पारिवारिक जीवन में खुशियां तभी होती हैं जब पति और पत्नी के बीच अत्यधिक लगाव, स्नेह, त्याग, ममत्व की भावना हो। जहाँ पति-पत्नी का तालमेल अच्छा नहीं हो पाता वह घर और बच्चों की हालत भयानक हो जाती है, क्योंकि पति-पत्नी निरन्तर छोटी-छोटी बात को लेकर झगड़ते हैं, वहाँ बच्चों की मनःस्थिति एक छोटे से दायरे में बंध जाती है और बच्चों का व्यक्तित्व विकास सुखा-सुखा हो जाता है यहीं से अनेक पारिवारिक समस्यायें उत्पन्न हो जाती है। विष्णु प्रभाकर का कथा साहित्य नारी को केन्द्र में रखकर आगे चलता है उन्होंने पति और पत्नी के प्रेम को मूल्यवान बताकर उसे टिकाने के लिए कई बाते बतायी है तो कई जगह ऐसे दम्पतियों का चित्रण मिलता है कि पुरुष जब अपनी जिम्मेदारीयों से फिसल जाता है तब पत्नी का पर पुरुष के प्रति का आकर्षण अत्यंत बढ़ जाता है। नतिजा यह निकलता है कि पति होते हुए भी पत्नी पर पुरुष को तन-मन से अपना लेती है। अतः पति-पत्नी रूपी दोनों तराजु का सप्रमाण होना खूब ज़रूरी है।

विष्णु प्रभाकर रचित 'एक ओर दुराचारिणी' और लावा जैसी कहानियों में दाम्पत्य जीवन सम्बन्धी समस्या को लेकर कई बाते रखी है जो इस प्रकार है–

“एक ओर दुराचारिणी” नामक कहानी में नायिका शरबती दिनरात मेहनत करने पर भी सास और पति की पिटाई ही उसे नसीब होती है। शरबती मृणाल के घर काम पर आती है। मृणाल का पति हमदर्दी है।

एक दिन तड़के ही शरबती मृणाल के घर आ टपकती है। पति-पत्नी दोनों शरबती को देखकर आसक्ति हो जाते हैं। शरबती आश्वासन पाकर आँख से आँसू गिराने लगती है तो ऐसा लगता है कि एक दुराचारिणी को समझने वाले कोई है और अपने अंदर की बात को दोनों के सामने रखते हुए कहती है कि उन्होंने कल बेरहमी से मारा, अब में वहाँ कभी नहीं जाउगी। इसी घर में किसी कोने में पड़ी रहूंगी। शरबती के निले शरीर को देखकर मृणाल क्रोध-कम्पित होकर पति से कहती है ऐसे लोगों को हवालात की हवा दिलवानी चाहिए। एक दिन शरबती रात देर से आती है तो मृणाल उसकी अच्छी खातिर दारी करती हैं और पति से कहती है कि अब इसे घर नहीं रख सकते। अनायास एक दिन शरबती अपने प्रेमी रामप्रसाद के साथ अपने दुःख दर्द बांटती हुई रंगे हाथ पकड़ी जाती है। उसके दर्द, उसकी तड़पती भावना व पति के प्रति असीम प्यार को देखकर मृणाल व उसके पति हैरान रह जाते हैं। विष्णु प्रभाकर यही बताना चाहते हैं कि किसी भी वर्ग की नारी अपने पति से अलग होकर जीना पसंद नहीं करती। उससे बंधे रहकर भी उसे सुख मिलता है। स्वयं विष्णु प्रभाकर एक पात्र के माध्यम से कहते हैं "कैसा है यह ओधड़दानी संबंध? क्यों एकबार एक ही होकर नारी उससे मुक्ति पाना नहीं चाहती? क्या यह उसका आन्तरिक सहज विश्वास है या समाज जन्य भाव।"[19]

“लावा” यह कहानी औरत पर हो रही जुल्म पर आधारित है। गौरी घर का सभी काम चुपचाप कर लेती है लेकिन फिर भी उसका पति शराब के नशे में गौरी पर जुल्म करता है, उसे मारता पिटता है लेकिन वह मुँह से एक शब्द निकाले बिना उसे सहती है और जुर्म करने वाला

पति थोड़ी सी भी मन में ग्लानि न रखकर सीना चौड़ा करके घूमता है। गौरी जैसे औरतों के कारण ही ‘रामेसूर’ जैसे पुरुष ज़ुल्म करके भी समाज में सीना चौड़ा करके आराम से जी रहे हैं।

4.2.4 साम्प्रदायिक दंगों का ख़ूनी प्रभाव:

विष्णु प्रभाकर ने देश के स्वतंत्र होने के कुछ समय पूर्व से लेकर कुछ समय बाद तक होने वाले साम्प्रदायिक दंगों के खूनी प्रभाव को स्वयं देखा और भोगा है। इन दंगों में होने वाले व्यापक नर-संहार ने मानव समाज को झकझोरा है।

ताँगेवाला, एक माँ एक देश, मेरा बेटा आदि कहानियाँ इस साम्प्रदायिकता उसकी भयावहता और संकटग्रस्त आदमी का चित्र अनेक कोणों से उजागर करती हैं।

“ताँगेवाला” कहानी का अहमत तांगा चलाकर रोजी-रोटी कमाता है। अहमद रोज की तरह दिल्ली की सड़क पर ताँगा लेकर निकलता है, लेकिन कोई भी उसके ताँगे में नहीं बैठते, क्योंकि जाने वाले सभी हिन्दू हैं, जो मुसलमान के ताँगे में बैठने से कतराते हैं। उस समय चारों ओर का वातावरण भी कुछ ऐसा ही था। तब ताँगेवाला अहमद सोचता है- "वही शहर है, वे ही दुकानें ऊँची नीची और एक-दूसरे से सटी हुई। वे ही आदमी है। वे ही युवक-युवतियाँ सुन्दर और फैशनपरस्त, पर न जाने आज उनकी आँखों में क्या है? वे एक दूसरे को ऐसे देखते हैं जैसे सदियों के दुश्मन है। अभी कुछ दिन बीते, यहाँ कन्धे से कन्धा भिड़ता था, सवारियाँ पुकारती थीं और सदा के बदनाम ताँगे वाले मुस्कुराकर आगे बढ़ जाते थे, फिर एक दिन उसी बाजार में ऐसी कड़वाहट फैली कि राह चलना कठिन हो गया।“[20]

अहमद का बच्चा बीमार है, वह पैसा कमाकर उसके लिये दवा-दारू भी करना चाहता है, लेकिन दिन भर केवल दस पैसा ही कमा पाता है। शाम को वह दवा लेकर लौट रहा था तो पुलिस के सिपाही कर्फ्यू के उल्लंघन करने के जुर्म में पकड़कर तलाशी आदि लेने में समय बरबाद कर देते हैं और घर पर बच्चा बिना दवा के मर जाता है। आंतक का भय चारों और इतना फैला है कि लोग हर किसी पर संदेह करने लगे है।

दंगों पर लिखी कहानियों में "तोंगेवाला' कहानी हृदयद्रावक है। हजारीप्रसाद द्विवेदी इस कहानी के बारे में लिखते हैं "हंस में श्री विष्णु की एक कहानी छपी है, "तांगेवाला" इस छोटी सी कहानी में लेखक ने हमारे सामयिक मनोभाव की विपथगामिता को बड़ी सुन्दरता से व्यक्त किया है। जहाँ तक उसका व्यंग्यार्थ है यह कहानी बहुत श्लाघ्य है। वह हमें सोचने का मसाला देती है।“[21]

"मेरा बेटा" कहानी का बूढ़ा-बाप बड़े बेटे के साथ देश के उस भाग में रहता है, जहाँ पर मुसलमानों की संख्या ज्यादा है। जमीन-जायदाद आदि को बचाने के लिये वह मुसलमान बन जाता है। लेकिन उसका छोटा बेटा धर्म-परिवर्तन नहीं करता, वह मजहब के मामले में बड़ा कट्टर है तथा साम्प्रदायिक विद्वेष का मूल कारण काफिरों को मानता है। भाई-भाई का प्रेम धार्मिक कट्टरता के नीचे दब जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस आग के भड़कने से लाभ किसी को भी नहीं हुआ है। दो धर्म मनुष्य की भलाई का दावा करते-करते मनुष्य को ही नष्ट करने लगे हैं।

"एक माँ एक देश" यह कहानी भी द्वितीय महायुद्ध व अकाल से पीड़ित परिवार से सम्बन्धित है। नलिन बाबू व मृणाल का अपना छोटा सा परिवार है। युद्ध व अकाल ने मानव

की हालत बहुत बुरी बना दी थी। घर में मृणाल के दानों बच्चे भूख के कारण तड़पते-बिलखते हैं। मृणाल बच्चों को बहुत समझाती है लेकिन बच्चे समझने का नाम ही नहीं लेते तो कुछ होकर चीख उठती है -

"राक्षसों ने पांव खा डाली है। मौत भी नहीं आती इन्हें, कुएं से पेट में सब समा जाता है। कभी आग नहीं बुझती। इसे क्यों नहीं खा डालते। ना बाबा! ऐसी भी क्या राक्षसी भूख! अभागे भाग्य भी ऐसा लेकर आये हैं, देश में अन्न का दाना भी नहीं मिल रहा है।"[22]

नलिन बाबू मृणाल को समझाते हैं कि बच्चे नासमझ हैं। इन्हें इस तरह मत डॉटो, क्या पता उनमें से ही कोई महान व्यक्ति बनकर मुसीबत का हल करे। एक दिन ऐसा भी आता है भूख के कारण नलिन बच्चों की जिम्मेदारी मृणाल पर छोड़कर चल बसते हैं। "कितनी अजीब बात है कि जिस मनुष्य का डंका सारे ब्रह्मांण्ड में गूंज जाना चाहिए था, वह धरती पर अकाल व महायुद्धों के विषाक्त दमघोंटू वातावरण में भुखमरी और प्यास से मरता जा रहा है। भूखे बच्चे, मों की छाती पर खाल की बनी सूखे स्तनों को निचोड़ते हैं, जिसमें बच्चे माँ-बच्चे की सूरतें मिलकर मानवता का खुला उपहास करते हैं। मानव का गला घंटते भू पर मानव के रूप में शैतान निखने तंगते हैं।"[23] नलिन बाबू ने मरते वक्त मृणाल से कहा था कि दोनों बच्चे हमारे नहीं देश के हैं। उन्हें अच्छी तरह पालना। यह युद्ध यह महारामरी एक दिन खत्म हो जायेगी और बंगाल फिर से सोना उगलेगा। मृणाल बच्चे की परवरिश के लिये, उनकी भूख मिटाने शहर आती है। उसने सुन रखा है कि शहरों में भूख मिटाने को कुछ न कुछ मिल जाता है। इसका यह सपना वहाँ जाकर टूट जाता है जब एक सभ्य व्यक्ति खाना देने के नाम पर उसकी अस्मत लूटना चाहता है। मृणाल सोचती है शहर में कोई किसी का नहीं है, आज का मानव इतना गिर गया है, कि वह अपनी भूख मानव की रक्त से मिटाना चाहता है। अंत में वह अपना

बच्चा एक भद्र व प्रौढ़ के हवाले करती हुई कहती है कि "यह मेरी भूल थी। मैं उसे पाल सकूँगी। उसे तुम ही पाल सकते हो यह तुम्हारा है। देश का बच्चा है....."[24]

मानवता कुछ हद तक भ्रष्ट अवश्य हुई है पर कहीं वहीं इसी मानवता की रोशनी टिमटिमाती प्रतीत होती है। युद्ध और महामारी ने तो मानवता के नाम को मिटाने की कोई कसर बाकी नहीं रखी थी। पर न जाने कितनी अनगिनत माताएं अपने बेटे को देश के लिए छोड़ गई कि यह बेटा बड़ा होकर दूसरा देशबन्धु या गांधी बनकर मां और देश की इज्जत करेगा।

साम्प्रदायिक दंगों को अपनी लेखनी में उतारने का कारण बताते हुए विष्णु जी कहते हैं - "पंजाब में साम्प्रदायिक समस्या तो थी । बहुत पास से हिन्दू मुसलमान, हिन्दू-सिख जाट बनिये को एक दूसरे से नफरत करते देखा है। वह नफरत व्यवहार में गहरी उतर गयी थी । दिन-भर एक-दूसरे के साथ काम करते थे, हँसते-बोलते थे और रात को एक-दूसरे को नीचा दिखाने तथा मार डालने की योजनाएँ बनाते थे । मैने स्वयं मुसलमान, सिख और जाट मित्रों के आक्रमण सहे हैं। भयंकर दंगों, रक्तपात, और हत्याओं का साक्षी रहा हूँ।"[25] इसीलिए साम्प्रदायिकता कहीं प्रश्न बनकर, तो कहीं गंभीर रूप से इनकी कहानियों में उभरी है।

4.2.5 निम्नवर्गीय जीवन की विवशताओं का चित्रण:

समाज में अत्यंत निम्न स्तरीय जीवन जीनेवाले भिखारी, तांगेवाले वर्ग की गरीबी, उनकी अन्य आर्थिक समस्याओं पर भी विष्णु प्रभाकर का ध्यान गया है।

“तांगेवाला” कहानी का अहमद दिनभर की कमाई केवल तीन रुपये पाता है। बच्चे की बीमारी में पैसों की अभाव के कारण इलाज भी नहीं करवा पाता। उन तीन रूपयों से ही

वह बच्चे की दवाइयों खरीदकर घर पहुँचता है तो देखता है बच्चा मर गया है। वक्त पर दवा न मिलने के कारण उसको अपने बच्चे को भी खोना पडता है।

“हमें गिरानेवाले” कहानी में इसी वर्ग की विवशताओं का हृदयस्पर्शी चित्रण आता है। समाज इतना क्रूर है कि वह गिरे हुए लोगों को और गिराता है, इसका अहसास बिहारी को बाजार में होता है क्योंकि उसकी अभावग्रस्तता का लोग मजाक उड़ाते हैं।

4.2.6 नारी की सामाजिक स्थिति:

स्वातंत्रयोत्तर कहानियों में नारी चरित्र विभिन्न रूपों में उभरकर सामने आया है। भारतीय नारी वात्सल्य, त्याग और स्नेह जैसे गुणों से मंडित है, लेकिन विभाजन के समय खूनी दंगों के प्रभाव में अधिक सतायी गयी है। विष्णु प्रभाकर की कहानियों में दंगों से प्रभावित नारी के साथ-साथ सहनशीलता, कर्तव्यपरायणता, दृढ़ता, सेवाभावना पतिपरायणा नारी भी है। नारी का चरित्र संघर्षशील, विवश, त्यागमयी ममतामयी तथा असहाय के रूप में अधिक उभरकर सामने आया है।

विष्णु प्रभाकर ने “एक माँ एक देश", "एक और दुराचारिणी", "मारिया", “चाची”, ‘लावा’ और ‘बँटवारा’ कहानियों के माध्यम से संयुक्त परिवार के विघटन की समस्या को दिखाया है-

“एक माँ एक देश" कहानी में बंगाल का अकाल और उससे जूझते मनुष्य को दिखाया है। नलिन के मरने के बाद मृणाल अपने भूखे बच्चों को भूख से तड़प-तड़पकर मरते देखना नहीं चाहती इसीलिए वह शहर आ जाती है, रोजी-रोटी की तलाश में। मृणाल ने सुन रखा था कि शहर में खाने को मिलता है। एक भद्र पुरुष आकर उससे कहता है "मेरे साथ चलो, तुम्हें

कपड़े मिलेंगे। मेरे देश की युवतियो को क्या इस तरह रहना सोहाता है और फिर तुम तो……"[26]

उपर्युक्त कथन को देखकर समझ सकते हैं कि बहुत-सी नारियों को सामाजिक कुरीतियों के कारण परिस्थितियों से विवश होकर वेश्यावृत्ति को अपनाना पड़ता है। इसके अतिरिक्त उनके पास कोई मार्ग नहीं होता है।

"एक और दुराचारिणी" कहानी की नायिका जिन्दगी के अभावों के साथ जूझते-जूझते तंग आ जाती है। एक तरफ पति है तो दूसरी तरफ़ प्रेमी। इस कहानी के माध्यम से लेखक यही बताना चाहते हैं कि नारी को सती बनाना भी पुरुष के हाथ में है और वेश्या बनाना भी। नायिका जिन्दगी के अभावों से जुड़ने के साथ ही पति और प्रेमी के बीच झुंजती रहती है। एक दिन शरबती अपने प्रेमी रामप्रसाद के साथ अपने दुःख-दर्द बाँटती हुई पकड़ी जाती है। उसके दर्द, उसकी तड़पती भावना, व पति के प्रति का असीम प्रेम को देखकर मृणाल और उसके पति हैरान हो जाते हैं। वह पति के अत्याचारों से बेजार है पर उसे छोड़ भी नहीं पाती और तनाव में ही जीवन गुजारती है।

"मारिया" कहानी की नायिका एक विदेशी महिला है। उसके मुक्त व्यवहार को भारतीय पुरुष उसे अपने प्रति आकर्षण समझता है। मारिया भारतीय पुरुष के विचारों पर करारी चोट करती हुई उसे बताती है - "मुक्त व्यवहार वासना के कारण न होकर वासना के अभाव के कारण हो पाता है।"[27]

"लावा" नामक कहानी में औरतों पर हो रहे जुल्म को चित्रित किया है। एक रात गौरी का पति शराब पीकर घर आता है और अपनी मनमानी करने लगता है इसलिए गौरी उसे

टोकती है जिसके कारण उसका पति उसे आग लगाकर जला देता है उस हादसे मे गौरी आधी आग में जल जाती है लेकिन वह किसी से भी कुछ नहीं कहती चुपचाप उसका जुल्म सहती रहती है। पुलिस भी जब उससे पूछती है तब वह कोई कारण बता देती है। गोरी जैसे औरतों के कारण ही रामेसूर जैसे पुरुष जूल्म करके भी समाज में सीना चौड़ा करके आराम से जी रहे हैं।

नारी जीवन अनेक संघर्षों से पीरा हुआ है। फिर भी उनका जुड़ना समाज के लिए श्रेयकर वन पड़ा है। विष्णु जी के कथा साहित्य में नारी परंपरागत निष्ठा से अपने पति के साथ चलती दिखाई देती है। कतिपय वह परिस्थितियों से मुँह मोड़कर अपने कर्तव्य से दूर नहीं भागती जो परिस्थितियों के साथ संघर्ष करने के लिए सदैव तत्पर है।

“बँटवारा” नामक कहानी की नंदा बेटे को डाक्टरी पढ़ाने के लिए भिजवाना चाहती है। पैसों की चिंता होते हुए भी अपने जीने का एकमात्र सहारा दुकान गिरवी रखकर बेटे को डॉक्टरी पढ़ाने भेजती है।

अतः नारी की सामाजिक स्थिति का पूरा का पूरा चित्रण विष्णु प्रभाकर के कथा साहित्य में दिखाई देता है।

4.2.7 विवश तथा उपेक्षित माँ:

विष्णु प्रभाकर की कहानियों में नारी का यह रूप भी बडी सशक्तता से चित्रित किया गया है।

“नाग-फांस” कहानी की माँ विवश है क्योंकि एक बेटा भी उसके पास नहीं रहता इसलिए बेटे की बीमारी में वह डॉक्टर द्वारा दी गई दवा की शीशी रात के अंधेरे में चुपके से

उडेल देती है ताकी बेटा ठीक होने के बाद उससे दूर न हो जाए। यही चिंता उसे बार-बार सताती है। वह विवशता से ही इसतरह का बर्ताव करती है।

"अंधेरे ऑगनवाला मकान" कहानी की माँ की चिंता कुछ और ही है। चार-चार बेटे होकर भी बुढ़ापे में उसका कोई सहारा नहीं बन सका। सब विदेश में जाकर रहने लगे हैं।

इस प्रकार विष्णु प्रभाकर की कहानियों में माँ के रूप में नारी की विवशता के कई अलग-अलग चित्र देखने को मिलते हैं।

4.2.8 गरीबी की समस्या:

आज पैसा ही सभी संबंधों का मूल बन गया है। मानव-मानव के बीच का भावात्मक जुड़ाव खत्म हो चुका है। अधिकांश संबंध पैसो के आधार पर ही बना रहे हैं। पति- पत्नी, माता-पुत्र, भाई-बहन आदि जैसे भावात्मक संबंधों में अर्थ किस प्रकार अपना सर्वोच्च स्थान बना चुका है इसका वर्णन विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों में किया है।

"तांगेवाला" कहानी का अहमद दिनभर तांगा चलाकर गुजारा करता है, लेकिन उनका संघर्ष दिन से ही आरंभ होता है। कोई भी हिन्दु की सवारी उसे नहीं मिलती। दिनभर खा पाकर वह तीन रूपये पाने बाद बीमार बच्चे के लिए दवाईयाँ खरीदकर चलने लगता है तो पुलिस उसे हिरासत में लेती है। घर पर पहुंचने के लिए देर हो जाती है और उसे अपने मृत बच्चे को देखना पड़ता है। हिन्दु या मुसलमान होना व्यक्ति की सही पहचान नहीं होती। मात्र जातीय संकीर्णता उसके कौन होने का निर्माण करती है। "तांगेवाला" कहानी का अहमद का संघर्ष दोनों स्थितियों से गुज़रता है। उन गरीबी की हालत उनका पीछा कर रही हो ऐसा उनको महसूस होता है।

“बंटवारा” नामक कहानी में संयुक्त परिवार टूटने के कारण और जायदाद का बंटवारा हो जाने के बाद किस तरह गरीबी का सामना करना पड़ता है उसका चित्रांकन हुआ है। नंद को अपने बेटे के आगे की पढ़ाई के लिए पैसे की जरूरत होती है। वह अपने देवर से पैसे नहीं माँगना चाहती, लेकिन देवर जब उसके बेटे की पैसों से मदद करने आते हैं तो भाभी के स्वाभिमान को ठेस पहुंचती है। 'बंटवारा' कहानी के बारे में स्वयं विष्णु प्रभाकर कहते हैं "यह मेरी अनुभूत सत्य कहानी है। यही में एक बात स्पष्ट करना चाहूंगा कि मेरी कहानियों का आधार ज्ञान नहीं, अनुभूति रहा है। भले ही कहानी कला की दृष्टि से मैं अपनी उस अनुभूति को सही भाषा नहीं दे पाया हूँ। “बँटवारा” मेरे अपने बुजुर्गों के परिवार विभाजन की कहानी है। उसको मैंने बहुत पास से देखा है।"[28]

अतः उनसे भी आगे देखा जाये तो आज सभी जगह आत्महत्या, खून-खराबा, विश्वासघात आदि का जोर भी प्रचुर मात्रा में बढ़ा है जिसके मूल में मात्र गरीबी ही जिम्मेदार है।

4.2.9 मानवीय सम्बन्ध:

मानवीय सम्बन्ध ही शाश्वत सम्बन्ध होते हैं और मानवता में विश्वास रखना ही साहित्य में शाश्वत सम्बन्धों की स्थापना करना है। सहिष्णुता, विनम्रता, दया, सत्यपरायणा, ईमानदारी आदि मानवीय गुण हैं। जिस व्यक्ति के मन में मानवता के प्रति सच्चा प्यार और सम्मान होता है, उसका आदर्श महान होता है। वह मानवता के लिए अपनी जान की बाज़ी तक लगा देता है।

विभाजन के समय जो भयंकर हादसे हुए उसमें हिन्दू-मुसलमान दोनों बुरी तरह फंस गए थे। इन हादसों में अच्छे व बुरे दोनों प्रकार के लोग मौजूद थे।

"मुरब्बी" कहानी केवल हिन्दू-मुसलमानों के बीच प्यार को नहीं दर्शाती बल्कि दो मित्रों के बीच की मित्रता पवित्र रिश्ता या बन्धन को खुलकर सामने लाती है।

"एक अधूरा पत्र" नामक कहानी में लेखक हमेशा अस्पताल में जाकर घायल सैनिकों की सहायता करता था और उनके साथ बैठकर ढेर सारी बातें करता था जिनके कारण उनको भी लगता था कि हमारा भी कोई अपना है।

"मेरा बेटा" कहानी में बाप-बेटे की करुण कहानी है। धर्म परिवर्तन के बाद भी रिश्ते कभी नहीं टूटते बल्कि और मजबूत हो जाते हैं।

4.2.10 पुलिस द्वारा किया गया उत्पीड़न:

विष्णु प्रभाकर ने पुलिस की हृदयहीनता, शोषक प्रवृत्ति, भ्रष्टता तथा रिश्वतखोरी का अपनी कहानियों में खुलासा किया है। उनका कहना है कि जब रक्षक ही भक्षक बन जाएंगे तो लोगों का विश्वास उन पर से उठ जाएगा।

"ताँगेवाला" कहानी के अहमद को अपने बच्चे से हाथ धोना पड़ता है इन्हीं पुलिसवालों की मेहरबानी से।

"कर्फ्यू और आदमी" कहानी में लेखक ने कर्फ्यू के समय आम जनता को किस तरह इन खाकी वर्दी वालों का शिकार बनना पड़ता है, उसका बखूबी वर्णन किया है। जब पुलिस वालो को पता चलता है यह व्यक्ति कोई मामूली व्यक्ति नहीं बल्कि महान साहित्यकार है तो

वे उन्हें सम्मान के साथ घर पहुँचाते हैं। आम जनता को सताना तो इनका परम कर्तव्य बन गया है।

ये कहानियाँ पुलिस वर्ग के प्रति घृणा की आग का विस्फोट हैं और संकेत इस बात का भी है कि जिस दिन जनता एक जुट हो जाएगी और हिंसात्मक संघर्ष के लिए तैयार हो जाएगी इसी दिन से शोषक और उनके पोषक पुलिस वर्ग की हालत बदतर हो जायेगी।

4.2.11आम आदमी का संघर्षमय जीवन:

विष्णु प्रभाकर ने आम आदमी के जीवन को बड़ी निकटता से और बड़ी ही गहराई से पहचाना है। उनके संघर्षमय जीवन को अपनी लेखनी के माध्यन से कहानियों में बखूबी उतारा है। उनके दर्द, अभाव और बिखरने की तड़प विष्णु प्रभाकर की कहानियों में साकार हो उठी है। उन्होंने अपनी कहानियों में अधिकतर मध्यवर्गीय लोगों के संघर्षमय जीवन को दर्शाया है।

"अन्धेरे आँगनवाला मकान" एक ऐसी मानवीय संघर्ष की कहानी है जिसके पात्र परम्परागत जीवन मूल्यों से चिपटे हुए हैं। इस कहानी के बूढे दम्पत्ति इसी आशा में जी रहे हैं कि उनका बेटा विलायत से आएगा और ढेर सारी खुशियाँ लाएगा, लेकिन बेटा सीर्फ अपना कर्तव्य निभाने दो-बार दिन आकर चला जाता है। फिर वे बेटे के प्यार के प्यासे ही रह जाते हैं। यह कहानी सिर्फ इन बूढे दम्पत्तियों की नहीं बल्कि समाज में ऐसे अनगिनत लोग है, जिनकी समस्या इसी तरह की है ऐसे लाचार लोगों के जीवन को भी दिखाती है।

4.2.12 मानसिक द्वंद्व:

विष्णु प्रभाकर की ऐसी अनगिनत कहानियाँ हैं, जो मन के द्वन्द्व को चित्रित करती हैं। "नाग-फांश" में माँ अपने बेटे को अपने से जुदा नहीं करना चाहती, इसी वेदना को लेकर उसके मन में हलचल मच जाती है। अंत में वह अपने मन पर काबू पा लेती है और यह निर्णय लेती है कि वह कभी अच्छा न हो, बीमार ही रहे, ताकि पास रहे। माँ के मन में बेटे को लेकर हलचल मचना स्वाभाविक है, लेकिन उसका बीमार ही रहना उत्तना स्वाभाविक और विश्वसनीय नहीं लगता। माँ का आखिर अपने बेटे पर कितना ही स्नेह हो, वह उसकी भलाई ही चाहेगी न कि बुराई।

4.2.14 निष्कर्ष:

विष्णु प्रभाकर ने सामाजिक जीवन को जिस रूप में देखा, उसी रूप को अपनी कहानियों में उतारा। जीवन के कटु यथार्थ और वास्तविकता के प्रति उनकी दृष्टि हमेशा सजग रही है। उनकी कहानियों में मानवीय दुर्बलताओं के साथ-साथ अनुभूति की प्रामाणिकता भी देखी जा सकती है, जो पाठक को अपनी ओर अनायास आकर्षित करती है साथ ही यह कहानियाँ भ्रष्टाचार के प्रति एक ओर करारा व्यंग्य करती हैं तो दूसरी ओर पाठक को सोचने पर विवश करती है। इनकी कहानियों के पात्र मानवीय धरताल पर टिके है। विष्णु प्रभाकर स्वयं कहते हैं "मैं यथार्थ को स्वीकार करता हूँ। समाज-सापेक्ष होकर उससे रहा नहीं जा सकता। आदर्शों का बोझ मुझ पर है, लेकिन रुढ़ियों की स्थापना या उनमें विश्वास रखना..... आदर्श का पर्याय नहीं है। आदर्श मेरे लिए इतना ही है कि मैं जो कुछ चाहता हूँ, उसको रूप दे सकूँ।“[29]

विष्णु प्रभाकर की भाषा-शैली सरल है जो कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट करने में सहायक होती है। इस प्रकार देखते हैं कि इनकी कहानियों का विस्तृत फलक है, जिनमें उन्होंने मानव जीवन की अनेक समस्याओं को उभारा है।

आधार ग्रन्थ:

1. विष्णु प्रभाकर, विष्णु प्रभाकर संकलित कहानियां, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया 2009

2. सन्दर्भ सूची:

3. डॉ. धर्मवीर, लोकायती वैष्णवविष्णु प्रभाकर, वाणी प्रकाशन ग्रुप पृ. 87

4. विष्णु प्रभाकर, मेरी प्रिय कहानियाँ, राजपाल एंड सन्ज, दिल्ली 6, 1970, भूमिका पृ.1

5. हेम भारद्वाज का लेख, पृ.134

6. विष्णु प्रभाकर, विष्णु प्रभाकर संकलित कहानियाँ, नेशनल बुक ट्रस्, इंडिया 2009 पृ. 22

7. धर्मवीर, लोकयती वैष्णव, पृ.44

8. विष्णु प्रभाकर, विष्णु प्रभाकर संकलित कहानियाँ, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया 2009 पृ. 31

9. वही पृ. 33

10. वही पृ. 62

11. वही पृ. 66

12. वही पृ. 66

13. वही पृ. 70

14. वही पृ. 79

15. वही पृ. 90

16. वही पृ.126

17. डॉ विश्वनाथ मिश्र दत्ता डॉक्टर कृष्णचंद मिश्रा, विष्णु प्रभाकर, पृ.379

18. विष्णु प्रभाकर, विष्णु प्रभाकर संकलित कहानियाँ, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया 2009 पृ. 139

19. वही पृ. 142

20. वही पृ. 136

21. वही पृ. 100

22. वही पृ. 43

23. पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी, सावधानी की आवश्यकता, विश्व भारती पत्रिका खण्ड 6 अंक 2 अप्रैल-जून 1947

24. विष्णु प्रभाकर, विष्णु प्रभाकर संकलित कहानियाँ, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया 2009 पृ. 22

25. धर्मवीर, लोकयती वैष्णव, वाणी प्रकाशन ग्रुप पृ.44

26. विष्णु प्रभाकर, विष्णु प्रभाकर संकलित कहानियाँ पृ. 31

27. डॉ. महिप सिंह, विष्णु प्रभाकर- व्यक्तित्व और समाज, संचेतन (साहित्यिक पत्रिका), 2017, पृ. 471

28. विष्णु प्रभाकर, विष्णु प्रभाकर संकलित कहानियाँ, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया 2009, पृ. 27

29. वही पृ. 78

30. विष्णु प्रभाकर, दस प्रतिनिधि कहानियां, किताब घर प्रकाशन 1st edition, 2016, पृ.9

31. विष्णु प्रभाकर, मेरी 33 कहानीयाँ (भूमिका), ई प्रकाशन भारतीय साहित्य संग्रह 2015, पृ. 2

पंचम अध्याय

निष्कर्ष

निष्कर्ष

विष्णु प्रभाकर ने अपनी रुचि एवं प्रतिभा के बल पर कहानी साहित्य की रचना की है। विष्णु प्रभाकर हिंदी के प्रतिनिधि लेखकों में से एक है। उन्होंने साहित्य की लगभग सभी विधाओं में एक अलग दृष्टि रखकर साहित्य का निर्माण किया है। उनका साहित्य सीधा जीवन से जुड़ा हुआ है। जिसमें उन्होंने सीधा मनुष्य के यथार्थ परिवेश को देखा है और उसे चित्रित किया है।

विष्णु प्रभाकर ने सन् 1934 से लेखन का कार्य शुरू किया था। वे सर्वप्रथम कहानीकार के रूप में अग्रसर हुए, पर ख्याति उन्हें नाटककार के रूप में ही अर्जित हुई। उनके कहानी-साहित्य में जीवन के प्रति एक गहरी अन्तर्दृष्टि देखी जा सकती हैं। भारत के विभाजन से पहले और भारत के विभाजन के बाद तक का आँखों देखा वर्णन किया है। "मानव' में उनकी गहरी आस्था है इसीलिए उन्होंने मानवता पर अपना घ्यान अधिक केन्द्रित किया है। इसीलिए उनकी गणना बडे-बडे लेखकों में की जाती है, जिन्होंने अपनी सशक्त लेखनी से साहित्य की अनेक विधाओं को समृद्ध किया।

इस शोध में विष्णु प्रभाकर की चयनित कहानियों में सामाजिक यथार्थ के विभिन्न सन्दर्भ को विश्लेषित करके बनती-बिगड़ती सामाजिकता का जायजा लिया गया है। उनकी कहानियों का प्रस्थान बिन्दु सांप्रदायिकता, धार्मिक समस्या, नारी की दशा, मध्यवर्गीय जीवन की त्रासदी, भ्रष्ट राजनीति, गलीच पुलिस व्यवस्था, अनेकानेक सामाजिक संदर्भ हैं। इन्ही सामाजिक संदभों को व्यंजित करते हुए विष्णु प्रभाकर की कहानियाँ अपनी पूरी प्रतिष्ठा के साथ लोकप्रिय हो गयी हैं। तेजी से बदलते हुए समय की तरह कहानीसाहित्य ने अनेक करवटें ली। हिन्दी कथा साहित्य में विष्णु प्रभाकर का योगदान अविस्मरणीय रहेगा क्योंकि उनके

कथा-साहित्य की पृष्ठभूमि सामाजिक यथार्थ से युक्त है। उनमें निहित समाज की विविध समस्याओं का हल और निवारण किया गया है। आजादी के बाद भारत में तेजी से बदलाव आया। नैतिक मूल्यों की निरन्तर गिरावट और बदलते सामाजिक परिवेश में आज विष्णु प्रभाकर की कहानियाँ विद्यमान है।उन्होंने अपने जीवन में अनेक बदलाव देखे। उन्होंने जिस युग की कथा चुनी, उसी के आधार पर पात्रों का चयन भी किया। प्रत्येक पात्र के आचार-विचार अपने युग के अनुसार हैं।

विष्णु प्रभाकर की कहानियों की कथावस्तु में संक्षिप्तता, मौलिकता, रोचकता, क्रमबद्धता, विश्वसनीयता, नवीनता व उत्सुकता आदि गुणों से युक्त है। कहानियों के शीर्षक भी स्पष्ट, विषयानुकूल, लघु, आकर्षक एवं नवीनता से युक्त है। उनकी कहानियों की विषयवस्तु स्पष्ट है। सभी कहानियों का आरम्भ विष्णु प्रभाकर ने वर्णन, वार्तालाप, चरित्र-चित्रण घटना एवं पात्र के माध्यम से किया है।

विष्णु प्रभाकर की सभी कहानियाँ कथोपकथन, भावात्मकता, व्यंग्यात्मकता, मनोवैज्ञानिकता तथा उद्देश्यपूर्णता के साथ-साथ स्वाभाविकता लिए हुए है। देशकाल व वातावरण कहानी के अनुकूल ही बन पड़े हैं। कहानियों की शैली रोचक और प्रभावशाली है। उनकी कहानियों का उद्देश्य मनोरंजन, उपदेश, आदर्श, समस्या चित्रण, राजनीति के चित्रण व समाज सुधार ही रहा है।

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि विष्णु प्रभाकर की कहानियों में पारिवारिक जीवन का विस्तृत चित्रण हुआ है। व्यक्ति और परिवार से सम्बन्धित सभी विषय उनकी कहानियों के कथाबीज बन चुके हैं। स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध, मान, मर्यादा और पत्नी सौंदर्य और

जवानी का दुरूपयोग, हिन्दु विधवा की करूणापूर्ण अवस्था, नारी विद्रोह की प्रवृत्ति, आज के परिवार में वृद्धों का स्थान, टूटते पनपते रिश्ते एवं धर्म की बाधा, पति-पत्नी के प्रेम का स्वरूप आदि विषयों को विष्णु प्रभाकर ने अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है।

विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखी साम्प्रदायिक दंगों से सम्बन्धित कहानियाँ आज भी प्रासंगिक हैं। कारण आज भी उसी तरह धर्म के नाम पर हिंसात्मक घटनाएं होती रहती हैं। जो दर्द व छटपटाहट उस व्यक्ति में थीं, आज के आधुनिक युग में भी मानव उसी दर्द और छटपटाहट में जी रहा है। जैसे 'तांगेवाला', 'मुरब्बी', 'मेरा बेटा, एक माँ एक देश। उनकी कहानी लिखने का कारण साम्प्रदायिक विद्वेष से उत्पन्न कटुता के वातावरण को खत्म कर मनुष्य के अंदर बैठी मानवीय भावना को जगाना है, ताकि देश के नागरिकों में भाई-चारे, एकता व देशप्रेम की भावना फैले, क्योंकि जनता के हित में ही देश का हित छिपा हुआ है। तांगेवाला कहानी को ही लीजिए, तांगेवाला कहानी का नायक अहमद साम्प्रदायिक दंगे में फ़सा है। तांगा चलाकर रोटी-रोटी कमाने वाला भला क्यों लोगों पर अत्याचार करेगा। पर उस समय वातावरण ही इस तरह विषैला था कि लोग प्रत्येक व्यक्ति को शंका की दृष्टि से देखते थे। तांगे वाले की हृदयहारी वेदना पाठक के हृदय को हिला कर रख देती है।

जातिवाद की बुराई को यूँ तो उन्होंने बचपन में ही निकट से देखा था। उनके घर के पास कुछ निम्न वर्ग के बच्चे थे, जिनसे मिलकर खेलने के लिए इनका बालमन तरसा जाता था। पर घर में उनके साथ खेलने के लिए मना किया था इसी कारण वे चुप हो जाते। जातिवाद पर से उनका विश्वास बचपन में ही उठ गया था। हिन्दू समाज में फैले इस विषैले सर्प को पूर्ण तौर से कोई भी महात्मा या ज्ञानी मार नहीं पाया है। यह विषैला सर्प आज भी यानी दिन-ब-दिन प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में अपनी चपेट में लेते ही जा रहा है। जातिवाद का

उल्लंघन करने पर भारी दण्ड दिया जाता है। 'ताँगेवाला', ‘मेरा बेटा’कहानियों में जातिवाद को देख सकते हैं। हमारे देश में दो धर्मों, दो विश्वासों, दो जातियों के बीच विसंगतियाँ अक्सर उभरती रहती ही है।

विष्णु प्रभाकर ने कहानी को यथार्थपरक रूप में प्रस्तुत करने तथा उसे विश्वसनीय बनाने के लिए कल्पना का सहारा भी लिया है। कहानियों के शीर्षक भी स्पष्ट, विषयानुकूल, लघु, आकर्षक व नवीनता से हैं। ‘मेरा बेटा’, ‘तांगेवाला’ आदि कहानियों के शीर्षक स्पष्टता लिए हुए हैं। एक और दुराचारिणी जैसी कहानियों के शीर्षक से कहानी की विषयवस्तु स्पष्ट होती है। ‘लावा’, ‘चाची’, ‘मारिया’, ‘मुरब्बी’ जैसे लघु शीर्षकों वाली कहानियों हैं। ‘एक और दुराचारिणी’, ‘बंटवारा’, ‘पर्वत से भी ऊंचा’ जैसी कहानियों के शीर्षक पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं, तो 'खंडित पूजा’, ‘मरिया' जैसी कहानियों के शीर्षक नवीनता लिए हुए हैं।

कथावस्तु का आरम्भ विष्णु प्रभाकर ने वर्णन, वार्तालाप, चरित्र-चित्रण, घटना व पात्र के माध्यम से किया है। एक और दुराचारिणी, खंडित पूजा, चाची, आश्रिता, आदि कहानियों का आरम्भ वर्णन द्वारा किया है। ‘साँचे और कला’, ‘नाग-फॉस’, ‘मेरा बेटा’, आदि कहानियों का आरम्भ वार्तालाप द्वारा हुआ है।

विष्णु प्रभाकर ने सामाजिक जीवन को जिस रूप में देखा, उसी रूप को अपनी कहानियों में उतारा। जीवन के कटु यथार्थ और वास्तविकता के प्रति उनकी दृष्टि हमेशा सजग रही है। उनकी कहानियों में मानवीय दुर्बलताओं के साथ-साथ अनुभूति की प्रामाणिकता भी देखी जा सकती है, जो पाठक को अपनी ओर अनायास आकर्षित करती है साथ ही यह

कहानियाँ भ्रष्टाचार के प्रति एक ओर करारा व्यंग्य करती हैं तो दूसरी ओर पाठक को सोचने पर विवश करती है। इनकी कहानियों के पात्र मानवीय धरताल पर टिके हैं।

विष्णु प्रभाकर की भाषा-शैली सरल है जिसके कारण सामान्य पाठक कहानियों को आसानी से पढ़ सकता हैं। इस प्रकार देखा जा सकता है कि इनकी कहानियों का विस्तृत फलक है, जिनमें उन्होंने मानव जीवन की अनेक समस्याओं को उभारा है।

सन्दर्भ सूची

सन्दर्भ सूची

आधार ग्रन्थ:

- विष्णु प्रभाकर, विष्णु प्रभाकर संकलित कहानियां, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया 2009

सहायक ग्रन्थ:

- श्री नवल जी, नालांद विशाल शब्दसागर, आदीश बुक डिपो, दिल्ली -110005, 1985 पृ. 407
- कल्पना पांडये, आचार्य रामचंद्र शुक्ल के साहित्य में सामाजिक दायित्व- बोध, नमन प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण- 2002
- कुमार सुरेंद्र, चित्रा मुदगल के कथा साहित्य में सामाजिक कथा
- डॉ. सुमा रोडनवर, विष्णु प्रभाकर की कथा साहित्य में सामाजिकता, अलका प्रकाशन 34/6 एच. ए. एल, कॉलोनी, 2005
- डॉ. अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली पटना इलाहाबाद, 2009
- डॉ. हरिलाल शर्मा, सामाजिक परिवर्तन में कथा साहित्य की भूमिका, अंनग प्रकाशन, दिल्ली
- डॉ. धीरजभाई वरणकर, कमलेश्वर का कहानी साहित्य और सामाजिक यथार्थ, ज्ञान प्रकाशन, 2009

- डॉ. राजवंश सहाय हीरा, भारतीय साहित्यशास्त्र कोष, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, 1973
- डॉ. सविता जनार्दनसबनीस, विष्णु प्रभाकर का कहानी साहित्य, साहित्य सागर, 2009
- डॉ. वीरेंद्र सिंह कश्यप, हिंदी कथा साहित्य में सांप्रदायिकता की बिसात, मानसी पब्लिकेशन, 2016
- डॉ. शहाजहानमणेर, सामाजिक यथार्थ और कथाकार संजीव, श्रुति पब्लिकेशन, 2009
- डॉ. महीप सिंह, विष्णु प्रभाकर व्यक्ति और साहित्य, संचेतन (साहित्यिक पत्रिका), 2017
- डॉ. रघुवर दयाल, हिंदी कहानी बदलते प्रतिमान,दृष्टि 64, प्रथम तल, डॉ मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
- डॉ. के. पी. शहा, विष्णु प्रभाकर की कथा साहित्य का अनुशीलन, संभावना प्रकाशन, हापुड़, 1983
- डॉ. राजलक्ष्मी नायडू, विष्णु प्रभाकर- व्यक्तित्व और कृतित्व, श्री राजीव दीक्षित, 2014.
- डॉ नागेंद्र, साहित्य का समाजशास्त्र, Nesanala, 1982
- धर्मवीर, लोकयती वैष्णव, वाणी प्रकाशन ग्रुप

- पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी, सावधानी की आवश्यकता, विश्व भारती पत्रिका खण्ड 6 अंक 2 अप्रैल-जून 1947
- महादेवी वर्मा- श्रृंखला की कड़ीयाँ, राधाकृष्ण प्रकाशन, 1942
- रामदेवी कानपूर, विष्णु प्रभाकर की कथा साहित्य में सामाजिकता, अलका प्रकाशन, 34/6 एच. ए. एल. कॉलोनी, 2005
- रामचंद्र वर्मा, मानक हिंदी कोश चौथ खंड, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, प्रथम संस्करण 1965
- रामचंद्र वर्मा, संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1929
- विष्णु प्रभाकर,विष्णु प्रभाकर संपूर्ण साक्षात्कार 13
- विष्णु प्रभाकर, दस प्रतिनिधि कहानियां, किताब घर प्रकाशन 1st edition, 2016
- विष्णु प्रभाकर, मेरी 33 कहानीयाँ (भूमिका), ई प्रकाशन भारतीय साहित्य संग्रह 2015,
- वामन, शिवराम आप्टे, संस्कृत- हिंदी कोष, ज्योतिषी प्रकाशन चौक वाराणसी - 221001, 1999
- शंभूनाथ, हिंदी साहित्य ज्ञानकोषखंड 6, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2019
- शंभूनाथ, हिंदी साहित्य ज्ञानकोषखंड 7, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2019
- श्यामसुंदर पाण्डेय, समकालीन हिंदी कहानी सरोकार और विमर्श, ज्ञान प्रकाशन, 2014

- शिव कुमार मिश्र, साहित्य और सामाजिक सन्दर्भ, प्रशासन संस्थान, 2012

शोध प्रबंध:

- कुमारी प्रीति, विष्णु प्रभाकर की कहानियों में सामाजिक, राजनीतिक यथार्थ एवं मनोवैज्ञानिक संदर्भ, ललित नारायण, मिथिला विश्वविद्यालयकामेश्वरनगर
- विष्णु प्रभाकर की कहानियों में कथ्यगत यथार्थ बोध, बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर
- ज्ञानेश्वर कुमार गुप्ता, विष्णु प्रभाकर की कहानियों में यथार्थबोध, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर, बिहार विश्वविद्यालय

आलेख:

- प्रा. माधव राजप्पा मुंड़कर, विष्णु प्रभाकर की कहानियों में सामाजिकता, नाइट कॉलेज ऑफ़ आर्ट्स एंड कॉमर्स, इचलकरंजी
- डॉ. भगवानदास वर्मा कहानी की संवेदनशीलता: सिद्धांत और प्रयोग
- डॉ. ममता सिंह, विष्णु प्रभाकर की कहानियों में मध्यवर्ग की मानवीय संवेदना
- डॉ. प्रत्यूष गुलेरी, विष्णु प्रभाकर का बाल साहित्य
- वीरेंद्र सक्सेना, आवारा मानुष- विष्णु प्रभाकर
- डॉ. वंदना, विष्णु प्रभाकर की साहित्यिक कृतित्व का विश्लेषण आत्मक अनुशीलन